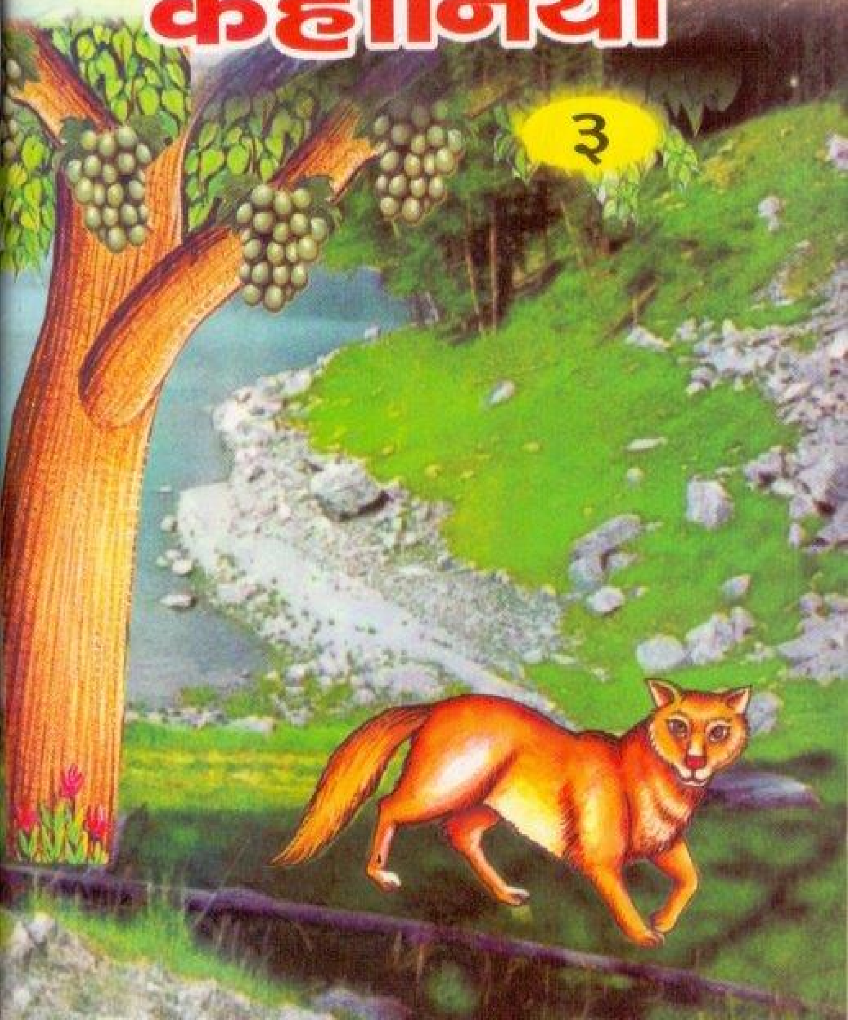
बाल निर्माण की कहानियाँ



बाल निर्माण की कहानियाँ

(भाग–३)

लेखिका
डा. आशा 'सरसिज'

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०– २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१४ मूल्य : ११.०० रुपये

विषय-सूची



नन्दू को दण्ड

नन्दू चूहे में एक बुरी आदत थी, वह थी बहुत बोलने की । हर समय वह कुछ न कुछ बोलता ही रहता था । उसकी माँ उसे समझाया करती थी कि बेटा ! बहुत बोलने की आदत ठीक नहीं है । व्यर्थ बोलने में बहुत-सी शक्ति खर्च होती है । काम की बात ही बोलो, पर नन्दू था कि मानता ही न था ।

धीरे-धीरे नन्दू में चुगलखोरी की आदत भी आ गयी । वह इधर की उधर लगाने लगा, झूठ भी बोलने लगा । वह झूठ बोलकर, चुगलखोरी करके दूसरों में लड़ाई भी कराने लगा । ऐसा करने में उसे मजा आने लगा ।

नन्दू रोज ही कुछ न कुछ शरारत करने लगा । एक दिन उसने देखा कि मीतू बतख अपनी चोंच में खाना दबाये चली आ रही है । मीतू यह खाना अपने बच्चों के लिये ले जा रही थी । खाना देखकर नन्दू को भी भूख लगने लगी । वह सोचने लगा कि वैसे तो मीतू कुछ देगी नहीं । इसलिये उसके पास पहुँच गया और बोला-"नमस्ते मीतू मौसी !"

'नमस्ते बेटा ! खुश रहो ।' मीतू कहने लगी ।

नन्दू बोला-'मौसी ! सारस मामा कह रहे थे कि तुम कुछ भी काम नहीं करती हो । तुम्हारा खाना भी वे ही खोजते हैं ।'

यह सुनकर मीतू एकदम भड़क उठी और बोली-'हाँ-

हाँ ! मैं तो निकम्मी हूँ, मैं क्यों ढूँढूगी अपना खाना ?' फिर वह अपने मुँह से जोर–जोर से बक–बक की आवाज निकालते हुए, आँखें नचाते हुए बोली–'यह सोना सारस भी न जाने अपने आप को क्या समझता है । एक दिन खाना खिला दिया तो रोज–रोज गाता फिरता है । अभी देखती हूँ उसे जाकर ।' और वह पैर पटकती, अपना खाना छोड़कर तुरन्त चल दी ।

नन्दू चूहे ने बड़ी खुशी से वह खाना खाया । फिर संतोष से अपनी मूछों पर हाथ फिराया । इसके बाद वह मीतू बतख और सोना सारस की लड़ाई देखने चल दिया ।

सोना सारस को तो कुछ भी पता न था । मीतू बतख जोर–जोर से लड़ती ही जा रही थी । नन्दू चूहे को उनकी इस लड़ाई में खूब मजा आया ।

ऐसी अनेक तरह की लड़ाइयाँ कराना नन्दू चूहे के लिये बड़ी मामूली सी बात थी ।

उसकी माँ उसे हमेशा समझाती थी–'नन्दू तुम जैसा काम करोगे वैसा ही तुम्हें फल मिलेगा । बुरे काम करने वालों को सदैव बुरा फल मिलता है ।'

पर नन्दू को अभी तक कोई बुरा फल मिला न था । इसलिये वह बुरे काम छोड़ नहीं पाता था ।

एक दिन नन्दू घूमते–घूमते महाराज सिंह की गुफा तक जा पहुँचा । महाराज बैठे आराम कर रहे थे । नन्दू को यहाँ भी शरारत सूझी । उसकी झूठ बोलने की आदत यहाँ भी न छूटी । उसने हाथ जोड़कर महाराज के आगे झुककर नमस्कार किया और बोला–'राजन् ! आप जैसे प्रतापी राजा कभी–कभी ही भाग्य से मिलते हैं ।'

सिंह ने अपने नथुनों को जोर से हिलाया और मूछों को गर्व से फड़फड़ाया ।

नन्दू आगे कहने लगा–'महाराज ! कोई आपकी बुराई करे तो मुझसे सहन नहीं होता ।'

'किसमें है इतना साहस ?' शेर दहाड़ा ।

नन्दू ने दोनों हाथ जोड़ते हुए झुककर कहा–'महाराज ! आपका मंत्री भोलू भालू यह कह रहा था कि आप तो सारे ही दिन पड़े–पड़े आराम फरमाते रहते हैं । जनता के सुख–दुःख से आपको कोई मतलब नहीं है ।'

'अच्छा ! कहकर सिंह गरजा । उसने नन्दू को वहीं रुकने का आदेश दिया और एक सैनिक को हुक्म देकर भेजा भोलू भालू को बुलाने के लिये ।

नन्दू मन में सोचने लगा कि आज मैं अच्छा फँसा । उसने तो सोचा था कि सिंह को भड़का कर वह तो चला जायेगा, पीछे सिंह और भालू दोनों आपस में लड़ते रहेंगे । पर सिंह ने तो उसे यहीं पर बैठने का आदेश दे दिया था । अब तो वहाँ से बाहर निकलना भी संभव न था ।

तभी नन्दू के दुर्भाग्य से मीतू बतख और सोना सारस भी वहीं आ पहुँचे । अब उन दोनों में सुलह हो गयी थी । नन्दू की वह चालाकी उन्हें पता लग गयी थी । वे उसकी चुगलखोरी की महाराज से शिकायत करने आये थे ।

मीतू बतख ने विस्तार से सारी घटना बतायी । उसे सुनकर सिंह को नन्दू चूहे पर बड़ा गुस्सा आया ।

तभी दरबार में लोमड़ी, हाथी, ऊँट, भालू आदि और जानवर भी आ गये । वे भी कभी न कभी नन्दू की शरारतों को भुगत चुके थे । सभी नें नन्दू की बुराई की ।

भोलू भालू कह रहा था–'महाराज ! मैंने तो कभी किसी से आपकी बुराई नहीं की । यह नन्दू ही सभी की बुराई करता फ़िरता है ।'

ऊँट, हाथी, लोमड़ी आदि सभी ने अपनी–अपनी गर्दन

हिलाकर इस बात का समर्थन किया । अब सिंह को बड़ी जोर का गुस्सा आ गया । उसने नन्दू को दण्ड सुनाया– 'नन्दू ! तुम्हारी इस आदत से सभी में झगड़ा होता है । दूसरों में लड़ाई कराकर तुम तमाशा देखते हो । मुझे तुम पर गुस्सा तो इतना आ रहा है कि तुम्हें फाँसी पर चढ़ा दूँ, पर अभी ऐसा नहीं होगा । एक बार तुम्हें सँभलने का मौका दिया जायेगा । मैं अपने सैनिकों को आज्ञा देता हूँ कि तुम्हारी पूँछ और मूँछ काट लें ।'

सिंह के सैनिकों ने तुरन्त आगे बढ़कर ऐसा ही कर दिया । मीतू बतख बोली–'कितना ही समझाया था इस नन्दू को, पर यह अपनी चुगलखोरी और झूठ बोलने की आदत छोड़ता ही न था । आखिर में इसे इसका दण्ड तो मिल गया । अब यह अपनी सब गलत आदतें छोड़ देगा ।'

सोना सारस कह रहा था–'बुरे काम का फल निश्चित ही मिलता है । आज नहीं तो कल वह भुगतना पड़ता है ।'

'न तो कोई प्राणी किसी का बुरा सोचें और न किसी का बुरा करें । हमेशा सबका भला सोचें और भला करें । इसी में बुद्धिमानी है ।' भोलू भालू ने कहा ।

नन्दू चूहे का सिर शर्म से झुक गया था । कटी पूँछ और कटी मूछों को लेकर माँ के सामने वह धाड़ मारकर रो पड़ा । माँ सिर पर हाथ फिराती हुई बोलीं–'बेटा ! जो हुआ है उसे भूल जाओ । मूँछ और पूँछ तो दुबारा आ जायेंगी । अब तुम अच्छा बनने की कोशिश करो ।'

'हाँ माँ ।' ऐसा कहकर नन्दू अपनी माँ से चिपटकर बिलख पड़ा ।



मित्र की पहिचान

अमरकण्टक वन में एक पेड़ के नीचे रानी चींटी का घर था । एक बार अमरकण्टक वन में अकाल पड़ा । उसकी वजह से जीव-जन्तुओं को खाना मिलना भी मुश्किल हो गया । रानी की सारी सेना, सारे ही परिवार के सदस्य उस अकाल में मर गये । रह गयी अकेली रानी चींटी ।

पहले तो रानी बड़ी ही उदास-उदास रहती थी । फिर एक दिन वह सोचने लगी कि जो मुसीबत आने वाली है, वह तो आयेगी ही । आपत्ति को यदि हँसते-हँसते सहा जाये तो कठिनाई कम होती है । मुसीबत में साहस खोने पर और अधिक परेशानी ही बढ़ती है । फिर मैं अपना धैर्य क्यों खोऊँ ? जीना है तो हँसते-हँसते ही जीऊँ, बहादुरी से जीऊँ । जो होना था वह तो हो ही गया ।'

रानी ने यह भी सोचा था कि अब अमरकण्टक छोड़कर और कहीं चला जाये । यहाँ परिवार का कोई और सदस्य तो बचा नहीं है । उल्टे यहाँ रहने से मित्रों की याद और सताती रहती है ।

रानी चींटी अपना घर छोड़कर चल दी । चलते-चलते वह अमरकण्टक वन से बहुत दूर चली गयी । रास्ते में उसने अनेक नगरों को पार किया । शहर की हलचल में रानी का मन लगता न था । इसलिये उसने सतपुड़ा की पहाड़ियों पर निवास करना ही पसन्द किया ।

एक दिन सुबह-सुबह रानी सतपुड़ा के पहाड़ी प्रदेश पर पहुँची । रानी के प्रवेश करते ही एक चींटी मिली । वह

कहने लगी–'तुम कहाँ से आ रही हो बहिन ? लगता है बड़ी थकी हुई हो, आओ मेरा आतिथ्य स्वीकार करो ।'

रानी बतलाने लगी—'मैं अमरकण्टक वन से आ रही हूँ । कई दिनों से लगातार यात्रा कर रही हूँ । मेरे सभी सम्बन्धी मर चुके हैं । अब तो तुम मेरी सहेली ही बन जाओ जिससे मुझे भी कुछ राहत और खुशी होगी ।'

दूसरी चींटी कहने लगी–'तुम्हें अपनी सहेली बनाकर मुझे भी खुशी होगी । मुझे संगीता कहते हैं । चलो तुम मेरे घर चलो, वहीं पर रहना ।'

रानी ने आगे बढ़कर अपना मुँह संगीता के मुँह से मिलाया और दोनों मित्र बन गयीं ।

घर पहुँचकर संगीता ने एक विशेष प्रकार की ध्वनि की । तब उसकी सारी सेना और परिवार के लोग इकट्ठे हो गये । संगीता ने उन सभी से अपनी नई सहेली का परिचय कराया । सभी रानी से मिलकर बड़े ही खुश हुए ।

अब रानी और संगीता साथ–साथ रहने लगीं । वे साथ–साथ काम करती थीं और साथ–साथ ही घूमती थीं । रानी ने संगीता को नई–नई चीजें दिखायी थीं, जैसे कि नये तरीके से घर बनाना, बच्चों को अच्छी तरह पालना आदि । इन सभी के कारण संगीता और उसकी सेना की सारी चींटियाँ रानी को बड़े सम्मान के साथ देखती थीं । संगीता अपनी सेवक चींटियों से कहती थी–'जो जितना गुणवान होता है, उसका उतना ही आदर होता है । अगर तुम दूसरों से सम्मान चाहती हो तो गुणी बनो ।' वह हमेशा उदाहरण के रूप में रानी का नाम लिया करती थी ।

एक दिन की बात है कि संगीता और रानी अपनी कुछ सहेलियों के साथ घूमने निकलीं । रास्ते भर वे बड़ी प्रसन्नता से गीत गाती गयीं । जगह–जगह ठहरकर तरह–तरह का नाश्ता

भी करती गयीं । घूमते-घूमते सभी तालाब के किनारे पहुँचीं । वहाँ एक संजीव नाम का सारस रहा करता था । वह संगीता का मित्र था, उसने संगीता को एक कमल का फूल उपहार में दिया । संगीता ने संजीव सारस को इसके लिये धन्यवाद दिया । संजीव वापस लौट गया । तब संगीता तालाब के किनारे अपनी सहेलियों के साथ बैठकर उस कमल के फूल का पराग खाने लगी । सबने खूब छककर उसकी दावत उड़ायी । इसके बाद वे सारी की सारी चींटियाँ पानी पीने तालाब के किनारे उतरीं ।

और तो सब पानी पीकर ठीक से आ गयीं । परन्तु संगीता का पैर फिसल गया । वह पानी में गिर पड़ी । संगीता चीखने लगी-'बचाओ-बचाओ ।'

संगीता की पुकार सुनकर सारी की सारी चींटियाँ तालाब के किनारे पर आ गयीं । सभी खड़ी-खड़ी यही सोचती रहीं कि क्या करें, कैसे इसको बचायें ? नींतू चींटी बोली-'चलो कहीं से बड़ा-सा तिनका लायें ।' हंसू बोली-'कहीं से पत्ता खींच लायें ।'

सभी चींटियाँ आपस में बात कर ही रही थीं कि रानी अपनी जान की परवाह किये बिना पानी में कूद पड़ी । वह एक पत्ते के टुकड़े पर कूदी थी । पूरी बहादुरी से उस पत्ते को धकेलती हुई रानी संगीता के पास ले गयी । फिर अपना हाथ बढ़ाकर तुरन्त उसने संगीता को पत्ते पर खींच लिया । फिर पत्ते को खींचती हुई रानी तालाब के किनारे आ गयी ।

तालाब के किनारे खड़ी सभी चींटियाँ रानी का साहस देखकर हैरान थीं । वे अभी सोच ही रही थीं कि रानी अपनी जान की परवाह न करके संगीता को बचा लाई थी ।

सभी चींटियों ने मिलकर उस पत्ते को किनारे पर खींच

लिया । जिस पर रानी और संगीता बैठी हुई थीं । थोड़ी देर बाद संगीता पूरी तरह ठीक हो गयी ।

रानी का उपकार देखकर संगीता की आँखों में पानी भर आया था । वह रानी के गले से लिपटते हुए बोली–'बहिन ! आज तुमने स्वयं को खतरे में झोंककर भी मेरे प्राणों की रक्षा की है । यदि मुझे पानी में तनिक भी देरी हो जाती तो मेरा मरा हुआ शरीर ही शेष रहता ।'

'ऐसा न कहो संगीता बहिन ! बुरी बात मुँह से नहीं निकालते ।' अपने एक हाथ को संगीता के मुँह पर रखकर रानी कह रही थी । 'मित्र की सहायता करना मित्र का धर्म है । जो समय पड़ने पर मित्र की सहायता नहीं करता, वह सच्चा मित्र नहीं हुआ करता । वह तो मित्र होने का बहाना मात्र ही करता है । तुम्हारे लिये जो कुछ भी मैंने किया है, वह तो मेरा कर्तव्य था । वह सब तो मुझे करना ही चाहिये था ।'

अब संगीता की समझ में आ गया था कि वास्तव में उसकी सच्ची मित्र कौन है । सारी सहेलियों के रहते हुए भी संगीता के आज निश्चित ही प्राण चले जाते, यदि रानी न होती । उस दिन से उसके मन में रानी के प्रति आदर–सम्मान की भावना और अधिक बढ़ गयी है । अब संगीता की सहेलियों की समझ में भी यह बात आ गयी कि मित्र के मुसीबत में पड़ने पर अपने प्राणों की परवाह न करके उसकी रक्षा करनी चाहिये ।



जुगनुओं की कैद

एक बार सुन्दरकानन में कुछ आदिवासी घूमते हुए आ गये । उस वन की सुन्दरता से वे बड़े प्रसन्न हुए । उन्होंने वहाँ कुछ दिन रुकने का निश्चय किया । दिन में तो सूरज की रोशनी रहती है, इसलिये उनका काम चल जाता था, पर रात में उस वन में घोर अँधेरा छा जाता था । हाथ को हाथ दिखाई नहीं देता था । गुफा में रहने में आदिवासियों को बड़ी कठिनाई होती थी ।

आदिवासियों के नेता भगेलू को एक उपाय सूझा । दूसरे दिन वह अपने नन्हीं जाली के पिंजरे में ढेर सारे जुगनू भर लाया । जब रात हुई तो गुफा हल्के-हल्के प्रकाश से भर उठी । इससे सभी आदिवासी बड़े प्रसन्न हुए ।

आदिवासी तो सो गये, पर जुगनुओं को भला नींद कहाँ ? वे परेशान से पिंजरे में इधर-उधर चक्कर काट रहे थे । परन्तु पिंजरे में उन्हें कोई रास्ता न मिला । पिंजरे में रखी हरी-हरी टहनियों को उन्होंने छुआ तक न था । सभी बाहर निकलने को बेचैन थे । पिंजरे में उनका दम-सा घुट रहा था । छोटे बच्चे तो अपने घर और माता-पिता की याद करके रो भी रहे थे । सारे बड़े जुगनू पिंजरे का चक्कर लगाकर थक गये, पर उन्हें बाहर निकलने का कोई रास्ता ही न मिला । अन्त में वे सभी थककर बैठ गये । छोटे बच्चों को उन्होंने कुछ खिलाया-पिलाया और सुला दिया । अब वे सभी मिलकर सभा करने लगे ।

जुगनुओं का सरदार बोला—'भाइयो ! अचानक ही यह विपत्ति हम पर आ पड़ी है । धैर्य खोने से काम नहीं चलेगा । आपत्ति में हताश होना बुद्धिमानी नहीं है । आओ हम सब मिलकर विचार करें कि क्या करना है ?'

एक वृद्ध जुगनू कहने लगा—'मित्रो ! यों हमें इस पिंजरे में तो खाना मिल जायेगा और कोई कष्ट नहीं दिया जायेगा । परन्तु पराधीनता सबसे बड़ा दुःख है । बाहर अपने हाथ—पैरों से श्रम करके कमाने—खाने और घूमने में जो आनन्द है वह इस पिंजरे में कहाँ ? बन्धन तो आखिर बन्धन ही है ।'

'पर सवाल यह है कि यहाँ से निकला कैसे जाय ? हम सब तो कोशिश कर—करके थक गये, पर इस जाल को अपने मुँह से जरा भी न काट पाये । निकलने का तनिक भी रास्ता न बना पाये । लगता है अब तो जिन्दगी यहीं पर बितानी पड़ेगी ।' एक बुड्ढा—सा जुगनू निराशा भरी आवाज में बोला ।

'ऐसी बातें न कहो काका ! निराशा और असहायता की बातें सोचना भी उचित नहीं । इसके स्थान पर हम यह क्यों न सोचें कि हम जल्दी ही यहाँ से छूटने में सफल होंगे । आशा भरे विचारों से हमारा उत्साह बढ़ता है और सफलता भी मिलती है ।' जुगनुओं के सरदार ने बूढ़े जुगनू को समझाया ।

इतने में जुगनुओं के सरदार की पत्नी बोली—'मुझे तो एक उपाय सूझा है । इस दुःख की घड़ी में हमें अपने मित्रों की सहायता लेनी चाहिये । जो समय पर काम आता है, वही सच्चा मित्र है । मित्र की सहायता लेने में कोई हानि भी नहीं है ।'

सरदार की पत्नी की यह बात सभी जुगनुओं को बड़ी पसन्द आयी । अपने पंखों को जोर—जोर से हिलाकर, चमक—चमक कर उन्होंने इस बात का समर्थन किया ।

तभी सरदार ने गुफामें पंचम स्वर में गा रहे एक झींगुर को आवाज लगायी–'ओ झींगुर भाई ! जरा इधर तो आओ ।'

'क्या बात है ?' अपना गाना बीच में ही रोककर, मूँछों को हिलाते हुए झींगुर बोला ।

'तुम हमारी कुछ सहायता करो । अपने पैने मुँह से इस पिंजरे को तनिक–सा काट डालो । इससे हम सब बाहर निकल आयेंगे और स्वतंत्र हो जायेंगे ।' सरदार बोला ।

'हुँ–हुँ ! यहाँ तुम्हें दुःख ही क्या है ? आराम से तो रह रहे हो । मैं पिंजरा नहीं काटूँगा । अपने गानों से तुम्हारा मनोरंजन अवश्य कर सकता हूँ ।' नकचढ़ा झींगुर करने लगा ।

'माफ करना भाई ! जेल में रहकर कोई मनोरंजन नहीं होता ।' सभी जुगनू कहने लगे ।

'तो फिर मैं चला ।' कहकर झींगुर झी–झीं करता हुआ गुफा से बाहर चला गया ।

तभी जुगनुओं के सरदार ने देखा कि एक चींटी मुँह में खाना दबाये तेजी से गुफा की दीवार पर चढ़ी चली आ रही है ।

'चींटी बहिन ! जरा रुको तो सही ।' उसने आवाज लगाई ।

चींटी ने अपनी गरदन चारों ओर घुमाई और सोचने लगी कि यह आवाज किधर से आ रही है ? तभी उसने कुछ कहते हुए सुना, कोई कह भी रहा है–'मैं यहाँ इस पिंजरे में से जुगनुओं का सरदार बोल रहा हूँ ।'

चींटी ने देखा गुफा के एक कोने में एक पिंजरा लटका हुआ है और उसमें से सारे जुगनू चमक रहे हैं । उसे यह देख कर बड़ा ही आश्चर्य हुआ कि वे पिंजरे में कैसे आ गये ?

'चींटी बहिन ! हम कुछ दिनों से बड़ी विपत्ति में पड़े हैं । इसलिये हमारी कुछ सहायता करो । हमें धोखा देकर

इस पिंजरे में कैदी बनाया गया है । हम ठहरे ऊँची-ऊँची उड़ानें भरने वाले, इस जेल में हमारा जी घुट रहा है ।'

'मैं तुम्हारी कैसे सहायता कर सकती हूँ ?' अपना एक हाथ अपने सिर पर रखती हुई और कुछ गम्भीर स्थिति में सोचती हुई चींटी बोली ।

फिर कुछ देर बाद कहने लगी-'मित्र ! तुम चिन्ता न करो, जैसे भी होगा मैं तुम्हें इस कैद से मुक्ति दिलाऊँगी । सच्चा मित्र वही है जो विपत्ति में सहायता करे ।'

'बहिन ! पर तुमने क्या उपाय सोचा है ?' उन जुगनुओं के सरदार ने पूछा ।

'देखो भाई ! मैं खुद तो तुम्हारा पिंजरा काट नहीं सकती । मैं अभी-अभी चुलबुल गिलहरी को बुला लाती हूँ वह मेरी पक्की सहेली है और बड़े ही परोपकारी स्वभाव की है ।'

'पर क्या वह इतनी रात गये यहाँ पर आने को तैयार भी होगी ?' उस सरदार ने पूछा ।

चींटी कहने लगी-'वह जरूर आयेगी । दूसरों की सेवा-सहायता करने में चुलबुल गिलहरी को बड़ा आनन्द आता है और वह इसमें अपना सुख-दुख भी नहीं देखती ।'

ऐसा कहकर चींटी तेजी से चुलबुल गिलहरी के घर की ओर दौड़ गयी । वह चुलबुल गिलहरी आधी रात में ही वहाँ दौड़ी चली आयी । उसने जरा-सी देर में ही उस पिंजरे में अपने पैने दाँतों से सूराख कर दिया ।

'निकलो ! जुगनू सरदार ।' बुड्ढे जुगनू ने कहा ।

'नहीं काका ! पहले आप सब निकलें । सरदार का धर्म है कि पहले अन्य सभी को बचाये और अपनी रक्षा बाद में करे ।' सरदार जुगनू कहने लगा ।

पिंजरे से सबसे पहले बच्चे निकले । फिर बुड्ढे निकले और फिर सब जुगनू निकले । सबसे अन्त में निकले सरदार जुगनू और उनकी पत्नी ।

उन्होंने पिंजरे से बाहर निकलकर चींटी और गिलहरी को सभी जुगनुओं की ओर से धन्यवाद दिया । रुँधे हुए गले से वे कहने लगे–'बहिनो ! तुम दोनों ने आज हमारे प्राण बचा लिये । हम कैसे तुम्हारा आभार व्यक्त करें ।'

'इसमें आभार की क्या बात है भैया ! आपत्ति में पड़े हुए की सेवा–सहायता करना हम सभी का धर्म है । धिक्कार है उसे जो सिर्फ अपने लिये ही जीता है । हम सभी मिल–जुलकर रहें–यही अच्छा है ।' चुलबुल गिलहरी बोली ।

जुगनू गुफा में ऊँची–ऊँची उड़ानें भर रहे थे । जब तक एक–दो आदिवासी जग चुके थे । वे तो आश्चर्य से यही देख रहे थे कि सारे जुगनू पिंजरे से निकल कैसे आये ? तब तक सारे जुगनू गुफा से निकल भागे ।

लल्लू कैसे बदला

लल्लू कौवे के माता–पिता बचपन में ही मर गये थे । उसे पाला भी उसकी मौसी ने ही था । बचपन में लल्लू बुरी संगत में पड़ गया था । इससे वह बहुत शरारती भी हो गया था । कई बुरी आदतें उसमें आ गयी थीं । वह चोरी करने लगा था और दूसरों की चीजें छीनकर भी भाग खड़ा होता था । वह जब चाहे जिस को परेशान ही करता रहता था । किसी के कहने–सुनने का लल्लू पर कोई असर ही न होता था ।

एक दिन चंचल गिलहरी अपने बच्चे को रोटी का टुकड़ा खाने को दे गयी । वह नदी पर पानी लेने गयी थी । बस इतनी देर मे कहीं से उड़ता हुआ लल्लू आ गया । पीछे से वह चुपचाप से गिलहरी के मुँह से रोटी का टुकड़ा छीन कर ले गया । डाल पर बैठकर लल्लू उसे खाने लगा ।

गिलहरी का छोटा बच्चा रो उठा । उसे खूब जोर से भूख लग रही थी । 'ऊँ-ऊँ ! मामा मेरी रोटी मुझे दे दो । वह बच्चा रोते-रोते बोला ।

लल्लू ने अपनी गर्दन नचाकर उसे और भी चिढ़ाया । कॉव-काँव करते हुए लल्लू रोटी लेकर दूसरे पेड़ पर जा बैठा । गिलहरी का बच्चा रोता का रोता ही रह गया ।

एक दिन सोनू कुत्ता रसभरी पूरी खा रहा था । आधी पूरी उसने खाई, फिर जमीन में एक गड्ढा खोदा और आधी पूरी उसमें दवा दी । सोनू ने अपने दोस्त भानू के लिए वह रखी थी । लल्लू कौवा चुपचाप यह देख रहा था । सोनू के जाते ही पेड़ से उतरा । अपनी चोंच से उसने गड्ढा खोदा, फिर पूरी निकाली और पूरी को पंजे में दबाकर वह उड़ गया । नीम के पेड़ पर बैठकर स्वाद ले-लेकर उसने वह पूरी खायी ।

उधर सोनू ने भानू को पूरी गाढ़ने की बात बता दी थी । थौड़ी देर बाद वह वहाँ आया । उसने देखा कि गड्ढा खुदा हुआ था, मिट्टी बिखरी हुई थी । पूरी का वहाँ नाम नहीं था । वह समझ गया कि जरूर किसी ने शरारत की है । सामने पेड़ पर बैठा लल्लू कौवा मीठी नींद सो रहा था । भानू समझ गया कि जरूर यह लल्लू की शरारत थी, क्योंकि लल्लू ऐसे कामों में सारे जंगल भर में बड़ा बदनाम था ।

भानू वहीं गड्ढे के पास बैठ गया । लल्लू की आँख

खुली तो उसने निराश बैठे भानू को देखा । 'कैसे बैठे हो ?' लल्लू ने मन ही मन मुस्कराते हुए पूछा ।

'मैं यहाँ पूरी खाने आया था । मेरे दोस्त सोनू ने मेरे लिए उसे गाढ़ा था, पर कोई दुष्ट चुपचाप उसे निकाल ले गया ।' भानू पूँछ हिलाते हुए बोला ।

लल्लू कौवा कहने लगा-'बुरा न मानना काका ! इस अच्छी पूरी को देखकर मेरे मुँह में पानी भर आया था । मैंने ही उसे निकाला था ।'

भानू समझाने लगा-'लल्लू बेटा ! तुम चोरी करना छोड़ दो । चोरी करना कोई अच्छी बात नहीं है ।'

'वाह ! इसमें चोरी की क्या बात हुई ?' लल्लू पूछने लगा।

'दूसरों की चीज को उनसे बिना पूछ लेना चोरी ही तो है । कोई देखे या न देखे, पर भगवान हमारे कामों को देखते हैं । बुरा करने वालों को वह सदैव दण्ड देते हैं । जो भी बुरा करता है, उसे एक न एक दिन उसका फल जरूर भुगतना पड़ता है ।' भानू बड़ा गंभीर होकर बोला ।

'ऊँह ! बुड्ढों को भी हमेशा उपदेश देने की आदत-सी पड़ जाती है ।' यह कहकर लल्लू ने मुँह बिराया, पंख फड़फड़ाए और उड़ चला ।

बड़ों के उपदेश सुनते-सुनते लल्लू तंग हो गया था । भानू काका, सोनी गाय, चंचल गिलहरी, कालू कौवा सभी उसे चोरी न करने का उपदेश देते थे, पर लल्लू कौवे को उनकी सारी बातें बेकार ही लगती थीं । क्योंकि उस कौवे को अभी तक कोई भी सबक नहीं मिला था ।

पर बुरा काम करने वालों को एक न एक दिन दण्ड मिलता ही है । बुरे कामों से कभी सफलता नहीं मिला

करती । बुरा काम करने वालों को सभी तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं । लल्लू को भी देखकर जंगल के सारे जानवर अपना मुँह फिरा लेते थे । कोई उससे ठीक से बात करना पसन्द न करता था । कोई भी अपने बच्चों को उसके साथ खेलने ही नहीं देता था । वह अपने को बड़ा ही अकेला महसूस किया करता था ।

चोरी करके, छीन–झपट करके जो माल वह लाता था तो उसे लोमड़ी काकी लल्लू कौवा को बहला–फुसलाकर ले जाती तो कभी चम्पू गीदड़ लल्लू की अधिक चापलूसी करके उस माल पर हाथ साफ करता ।

एक दिन लल्लू को बुखार आ गया । उससे हिला भी नहीं जा रहा था । नीम के पेड़ पर बने अपने कोटर में सारे दिन वह प्यासा बैठा रहा । लोमड़ी काकी और चम्पू गीदड़ उस दिन आये । लल्लू उनसे दो घूँट पानी लाने की कह–कहकर थक गया, पर उन दोनों में से किसी ने भी पानी लाकर नहीं दिया । वे तो उस दिन भी लल्लू कौवा का माल हड़पने के लिये आये थे । लाचार होकर वह प्यासा ही तरसता रहा ।

लल्लू अपने कोटर में बैठा–बैठा यही सोचता रहा कि बुरे काम करने वाले से अधिक अभागा और कोई नहीं है । उसे अन्त में बड़ा पश्चात्ताप ही करना पड़ता है । विपत्ति में उसका कोई सहायक नहीं हुआ करता । बुरे काम का फल भी कभी न कभी मिलता ही है । समाज में एक–दूसरे से मिल–जुलकर रहना चाहिये । एक–दूसरे की सहायता करनी चाहिये । तभी संकट के समय भी हमारी सहायता करेंगे । तभी दूसरे हमें अधिक से अधिक प्यार करेंगे और हमको सहयोग देंगे ।

लल्लू उसी दिन से बदल गया है । विचार बदलने पर व्यवहार भी बदल जाया करता है । अब वह दूसरों की कोई भी चीज नहीं छीनता, चोरी नहीं करता । वह सदैव दूसरों की भलाई करता है । सबकी सहायता करता है । जंगल के सारे जानवर और पक्षी बड़ा ही आश्चर्य करते हैं कि लल्लू कैसे बदल गया ? अब वे सब उसकी प्रशंसा ही करते रहते हैं ।



गुस्से का फल

चम्पू बन्दर की शरारतों से अमरकण्टक वन के सारे जानवर बड़े परेशान थे । उसकी शरारतों का कोई अन्त न था । कभी वह पेड़ की छाया में सोते हुए किसी भालू की पूँछ खींचकर भाग जाता । कभी किसी बूढ़े जानवर का खाना छीन लेता । कभी किसी सोते जानवर पर पानी ही छिड़क आता ।

चम्पू की माँ उसे समझाती थी–'बेटा ! तुम यह बेकार के शरारत भरे काम छोड़ दो । इनसे दूसरों को परेशानी होती है, इससे तुम्हारा भी कुछ भला नहीं होता है । इतनी शक्ति और समय तुम दूसरों की सहायता करने में लगाओगे तो सभी तुम्हारी बढ़ाई करेंगे और सभी तुम्हें प्यार करेंगे ।'

पर चम्पू की समझ में माँ की सीख आती ही न थी । एक दिन तो वह शरारत करना बन्द रखता, पर दूसरे दिन से फिर उसका काम चालू हो जाता ।

पर इस बार तो चम्पू बन्दर की शरारतों की हद ही हो गयी । घटना यों घटी कि चम्पू पीपल के पेड़ पर बैठा था । उसी पर नन्दा कौवा और उसकी पत्नी काली भी रहते थे । नन्दा कौवा बार–बार कौंव–कौंव करके अपनी पत्नी को पुकारता था । चम्पू बन्दर बोला–'वाह ! ईश्वर ने कैसी बढ़िया आवाज दी है तुम्हें ।'

यह सुनकर नन्दा कौवा बोला–'चम्पू ! तुम यहाँ से चले जाओ, हमें अपना काम करने दो । जहाँ तक आवाज का प्रश्न है तो हमारी आवाज ही भली है । उससे कोई डरता तो नहीं । हम घुड़की देकर किसी को डराते तो नहीं हैं ।'

नन्दा कौवे की बात सुनकर चम्पू को गुस्सा आ गया । उसने तुरन्त आगे बढ़कर पेड़ की डाल पर लटका नन्दा का घोंसला तोड़ डाला । उसमें बैठे दो छोटे–छोटे बच्चे भी चम्पू ने कुचल डाले । यह देखकर नन्दा और काली हाय–हाय कर उठे ।

चम्पू ने यह काम जान–बूझकर नहीं किया था । गुस्से में ही अचानक हो गया था । काली कौवी अपने बच्चों के मरा देखकर चीख–चीख कर रो उठी । नन्दा कौवा की तेज आवाज सुनकर ही बहुत से पशु–पक्षी वहाँ इकट्ठे हो गये । सभी पूछ रहे थे–'क्या बात है ? क्या हुआ ?'

सभी ने चम्पू की करतूतें सुनीं तो उन्हें बड़ा गुस्सा आया । कालू भालू ने चम्पू को गिरफ्तार किया और महाराज शेर की अदालत में ले चला । उसके पीछे–पीछे नन्दा कौवा, काली कौवी, सोनी गाय, प्रीता लोमड़ी, चुनिया बकरी तथा और बहुत से अन्य जानवर चले आ रहे थे ।

महाराज शेर की अदालत जमी हुई थी । बरगद के पेड़ के नीचे एक ऊँचे चबूतरे पर वे बैठे थे । न्याय कराने के लिये आये हुए कई जानवर वहाँ पहले से ही मौजूद थे । उन

सभी का न्याय करने के बाद महाराज शेर ने कालू भालू से प्रश्न किया–'कहिये ! आप कैसे आये ?'

कालू भालू ने गिरफ्तार किये चम्पू की ओर इशारा किया और सारी कथा सुना दी । काली कौवी रो–रोकर कहने लगी––'महाराज ! इस दुष्ट चम्पू बन्दर ने मेरे बच्चों को मारा है । मुझे न्याय मिलना चाहिये ।'

चम्पू सहम गया था । वह कह रहा था–'महाराज ! मैंने जान–बूझकर बच्चों को नहीं मारा है । मैं उस समय क्रोध में पागल हो गया था । गुस्से के कारण मुझे भले–बुरे का ज्ञान नहीं रहा था । मुझे माफ कर दीजिये ।'

सिंह कहने लगा–'चम्पू ! गुस्से की आदत बहुत बुरी है । क्रोध में अच्छे–बुरे का ज्ञान नहीं रहता, कुछ भी कर डालते हैं । यह सब तुम अब मान भी रहे हो । पक्का वायदा करो कि आगे से कभी क्रोध नहीं करोगे ।'

चम्पू ने अपने कान पकड़े और सभी के सामने प्रतिज्ञा की कि अब वह क्रोध नहीं करेगा ।

तभी सिंह महाराज के पीछे खड़ा उनका न्यायमन्त्री रामू रीछ तुरन्त बोला–'महाराज ! चम्पू पर हत्या का अभियोग है । उसे दण्ड दिया जाये ।'

चम्पू गिड़गिड़ा रहा था–'महाराज ! उस समय मैं क्रोध के कारण नासमझ हो गया था । मुझे माफ किया जाये ।'

शेर बोला–'भाई ! अपराध तुमने किया है तो दण्ड भुगतना ही पड़ेगा । हाँ ! इतनी बात है कि तुम अपनी गलती स्वीकार करते हो तो तुम्हें कठोर दण्ड नहीं मिलेगा ।'

फिर काली कौवी से शेर ने पूछा–'बहिन ! तुम्हीं बताओ, इसे क्या दण्ड दिया जाये ?'

काली कौवी बोली–'बच्चे तो मेरे आ नहीं सकते । इसका घर तोड़ दिया जाये । आगे से चम्पू कभी घर में न रहे, जिससे उसे याद रहे कि किसी के बच्चे उसने मारे थे ।'

सिंह ने यही दण्ड सुना दिया । चम्पू सिर झुकाकर चुपचाप सुनता रहा ।

सिंह के सैनिक जाकर तुरन्त उसका घर गिरा आये । चम्पू और उसके माता–पिता पेड़ की डालों पर ही तब से रहने लगे । इसी कारण आज तक बन्दर घर बनाकर नहीं रहते ।

उस दिन से चम्पू की सारी शरारतें छूट गयीं । ठीक ही कहा गया है कि अपनी समझ–बूझ नहीं खोनी चाहिये । सोच–समझकर काम करना चाहिये । क्रोध में जो कार्य किया जाता है उसका फल सदा बुरा ही मिलता है ।

पक्षियों की पचायत

अमरकण्टक जंगल में पीपल के एक पेड़ पर बहुत से पक्षी रहा करते थे । चित्रग्रीव कबूतर, सोनी चिड़िया, हरियल तोता मानी मैना, नन्दा कौवा एवं और भी अनेकों पक्षी वहाँ आ जुटते । सभी अपने–अपने घर का काम पूरा करके वहाँ आते थे । खाली समय में वे आपस में बतियाते थे ।

एक दिन मानी मैना बोली–'हम यों आपस में बातें करते रहते हैं, उसमें बहुत–सा समय यों ही बीत जाया करता है । क्यों न खाली समय में कुछ काम ही सीखा जाये ।'

मानी की यह बात सभी पक्षियों को बहुत पसन्द आयी । चिताग्रीव कबूतर ने अपनी गर्दन हिलाकर, सोनी चिड़िया ने

पंख फड़फड़ाकर, हरियल तोता ने टें-टें करके और नन्दा कौवे ने काँव-काँव करके उसकी इस बात का समर्थन किया ।

अब सभी आपस में मिलकर यह विचार करने लगे कि क्या काम सीखा जाये जिससे खाली समय का उपयोग हो । तय यह हुआ कि हर पक्षी एक-एक दिन सभी को काम सिखायेगा ।

सबसे पहले चित्रग्रीव कबूतर की बारी आई । चित्रग्रीव बोला-'भाइयो और बहिनो ! मैं चाहता हूँ कि आज तेज उड़ने का अभ्यास किया जाये । कई बार ऐसा होता है कि तेज न उड़ सकने के कारण हम शत्रु के मुँह में फँस जाते हैं ।'

और उस दिन मानी मैना की बारी आयी । वह बोली-'आज मैं आप सभी पक्षियों को आदमियों की बोली में बात-चीत करना सिखाऊँगी ।'

मानी मैना ने सभी को आदमियों की भाषा में बात करना सिखाया, पर बस एक हरियल तोता ही ऐसा था जो मानी का पाठ सीख सका । उस दिन हरियल तोता को प्रथम स्थान मिला ।

तीसरे दिन हरियल तोता की बारी आयी वह बोला-'मित्रो ! मैं आज आप सभी को भगवान का भजन करना सिखाऊँगा । मैं आज जब उड़ते-उड़ते नगर के पास से निकल रहा था तो मैंने एक मन्दिर से इस मन्त्र की आवाज सुनी थी-'ॐ भूर्भुवः स्वः....।' मन्दिर में इकट्ठे आदमी कह रहे थे कि इस मन्त्र का जप करने से बुद्धि शुद्ध होती है, विपत्तियाँ समाप्त हो जाती हैं ।

चित्रग्रीव कबूतर, सोनी चिड़िया, हरियल तोता आदि सभी पक्षियों ने मिलकर, अपने-अपने स्वरों को मिलाकर कहा-'ॐ भूर्भुवः स्वः ।'

फिर नन्दा कौवा हँसते हुए बोला—'लगता है तोतेराम ! तुम हम सबको पण्डितजी बनाकर छोड़ोगे । पर ध्यान रखना कि बगुला भगत की भाँति मत बनना ।'

कौवे की इस बात पर सभी पक्षी जोर से हँस पड़े ।

अगले दिन नन्दा कौवे की बारी थी । कौवा कहने लगा—'भाइयो और बहिनो ! मेरा अपना अनुभव है कि प्रसन्न रहने के लिये गाना—गुनगुनाना आवश्यक है । इसलिये मैं आज आप सभी को गाना सिखाना चाहता हूँ ।'

कौवे ने काँव—काँव करके किसी गीत की पहली पंक्ति गाई । फिर सभी से दुहराने के लिये कहा ।

'माफ करना कौवे भाई ! तुम्हारी आवाज तो बड़ी कठोर है । गाना सिखाने के लिये तो मीठी आवाज चाहिये ।' हरियल तोता कह रहा था ।

'हाँ भाई ! आज गला कुछ खराब—सा मालूम पड़ता है । सर्दी—जुकाम का कुछ असर हो गया लगता है ।' अपने पंजे से गले को पकड़कर कौवा बोला ।

'अरे ! आज तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है तो रहने भी दो । मत सिखाओ आज गाना, फिर कभी सिखा देना ।' सभी पक्षी एक स्वर में कहने लगे ।

तभी नन्दा कौवे की नजर कलिया कोयल पर पड़ी । वह उड़ते—उड़ते अभी—अभी पास के आम के पेड़ पर आ बैठी थी । वह बहुत अच्छी गायिका थी । पूरे अमरकण्टक वन में उसके बराबर अच्छा कोई नहीं गाता था ।

नन्दा कौवा बोला—'कलिया दीदी ! हमने तुम्हारे गाने की बड़ी प्रशंसा सुनी है । आज तुम इन सभी पक्षियों को अच्छा—सा गाना सिखा दो ।'

कलिया कोयल अपनी प्रशंसा सुनकर घमण्डी हो गयी थी । नन्दा की बात सुनकर बोली-'हुँ-हुँ ! अभी तो मैं थकी हूँ । अभी तो आकर यहाँ बैठी हूँ, भूखी भी हूँ । थोड़ा सुस्ता लूँ और कुछ खा-पी लूँ । तब मैं तुम्हारी कोई बात सुनूँगी ।'

'अरे दीदी ! तुम भूखी हो तो पहले से तुमने क्यों नहीं बताया ? हम भी तुम्हारे खाने के लिए कुछ लेकर आते हैं ।' वे सारे के सारे पक्षी कहने लगे ।

हरियल तोता उड़ा और एक मीठा-सा अमरूद लेकर आया । चित्रग्रीव कबूतर अनाज के दाने लाया । नन्दा कौवा मिठाई का एक टुकड़ा लाया । सोनी चिड़िया रोटी लाई । कलिया कोयल ने उस दिन खूब छककर खाना खाया ।

खाना खाने के बाद वह बोली-'अब मुझे नींद आ रही है । मैं थोड़ा-सा सोऊँगी ।'

'अच्छा दीदी ! तुम सो जाओ । हम सभी तुम्हारे जगने की प्रतीक्षा करेंगे ।' सब पक्षी कहने लगे ।

कलिया कोयल फिर आम के पेड़ पर जाकर सो गयी । इधर पीपल के पेड़ पर बैठे पक्षी बतियाने लगे । हरियल तोता बोला-'आज तो हम बहुत अच्छा गाना सीखेंगे ।'

चित्रग्रीव कबूतर बोला-'और गाना सीखने के लिए कितना कष्ट भी तो उठा रहे हैं हम ।'

मानी मैना और सोनी चिड़िया बोलीं-'ऐसा न कहो भैया ! गुरु की सेवा करके ही विद्या मिलती है ।'

हरियल तोते ने अपना सिर हिलाकर समर्थन किया-'हाँ ! जो गुरु के प्रति श्रद्धा रखता है वही सच्चा ज्ञान पाता है । उसी की विद्या सफल होती है ।'

नन्दा कौवा समझाने लगा–'जो गुरु की निन्दा करते हैं उनसे बुरा और कोई नहीं है ।'

इतनी देर में कलिया कोयल भी वहाँ उड़कर आ गयी । वास्तव में वह सोई हुई नहीं थी । वह आँखें बन्द करके आम के पेड़ पर बैठी थी । सभी की बातें उसने सुनीं । मन ही मन वह अपने को धिक्कार रही थी कि मैं क्यों अपनी विद्या का इतना घमण्ड कर रही हूँ । ये सभी पक्षी मेरे प्रति इतना श्रद्धा–भाव रखते हैं । मुझे इन्हें गाना सिखाना ही चाहिये ।

कलिया कोयल ने प्रसन्न मन से सभी को गाना सिखाया । उसकी मधुर आवाज सुनकर सभी पक्षी बड़े खुश हुए । शाम तक कलिया कोयल ने उन्हें कई गीत सिखा दिये ।

सूर्य अस्त होने तक पक्षी गाने का अभ्यास करते रहे । अन्त में उन्होंने कलिया कोयल को बहुत–बहुत धन्यवाद दिया । कलिया फिर आने का वायदा करके वहाँ से उड़ गयी ।

रात घिर रही थी । सारे पक्षी भी अपने–अपने घरों के लिये उड़ चले । रास्ते भर वे कलिया कोयल की प्रशंसा करते गये । नन्दा कौवा कह रहा था–'ज्ञान की सार्थकता इसी में हैं कि हमारे पास जो कुछ भी है वह दूसरों को भी सिखायें । जो ऐसा करता है उसकी विद्या बढ़ती ही जाती है । वही सफलता प्राप्त करता है, वही प्रसिद्धि पाता है और उसी का ज्ञान सार्थक होता है ।



चुलबुल का जन्मदिन

बाड़े के सारे जानवर उस दिन बड़े खुश थे । उन्हें शाम को चुलबुल खरगोश के जन्मदिन के उत्सव में जाना था । चुलबुल के माता-पिता का नाम था-मीना और प्रकाश । उनसे सभी जानवर बड़े प्रसन्न रहते थे । मीना और प्रकाश सदैव दूसरों की सहायता करते थे । विनम्रता से बोलते थे, पड़ौसियों से मित्रता का व्यवहार करते थे । दूसरों के दुःख-मुसीबत में साथ देते थे । यही कारण था कि सभी जानवर उन्हें चाहते थे । चुलबुल के जन्मदिन के अवसर पर जाने के लिये वे कई दिनों से प्रतीक्षा कर रहे थे ।

सभी जानवरों ने कुछ न कुछ उपहार एकत्रित कर दिये थे । सोनी गाय ने हरी-हरी घास इकट्ठी कर ली । मोनी बकरी खेत से गाजर-मूली उखाड़ लाई थी । लाली मुर्गी ने दाना इकट्ठा कर लिया था । मिक्की बतख नदी किनारे से कमल के फूल तोड़ लायी । सभी अपने-अपने उपहार लेकर झुण्ड बनाकर बाल-बच्चों सहित चुलबुल खरगोश के घर चले ।

चुलबुल खरगोश के घर उस दिन बड़ी रौनक थी । उसकी माँ मीना ने घर की खूब सफाई की थी और घर को खूब सजाया था । जगह-जगह फूलों के गुलदस्ते लगाये थे । तरह-तरह की खुशबू से सारा घर महक रहा था । मीना और प्रकाश स्वागत के लिये दरवाजे पर खड़े थे । उन्होंने हाथ जोड़कर, सफेद-सफेद दाँत निकालकर, हँसते हुए सभी मेहमानों का स्वागत किया । वे उन्हें घर के अन्दर ले गये ।

मीना का घर देखकर सभी मेहमान बड़े खुश हुए । जल्दी ही जन्मदिन का उत्सव शुरू हुआ । सभी जानवरों ने अपने-अपने उपहार दिये । मीना और प्रकाश बोले-'इतना सब कुछ लाने की क्या जरूरत थी ?'

मोनी बकरी बोली-'बहिन ! ये सारी चीजें हम चुलबुल के लिये लाये हैं । तुम मना न करो । हम कोई कीमती उपहार नहीं लाये । साधारण-सी चीजें लाये हैं ।'

प्रकाश खरगोश कहने लगा-'भाइयो और बहिनो ! तुम सभी चुलबुल खरगोश को आशीर्वाद दो, जिससे वह अच्छा बने । शुभकामनाओं और आशीर्वादों में अपार शक्ति होती है । वे हमें अच्छा ही बनाते हैं ।'

अब आशीर्वादों का क्रम आरम्भ हुआ । सोनी गाय सबसे बड़ी थी । सबसे पहले वह उठी और बोली-'चुलबुल ! ईश्वर तुम्हें सद्बुद्धि दे । तुम सदैव अच्छी-अच्छी बातें सोचो ।'

मोनी बकरी ने कहा-'चुलबुल ! तुम सदैव ही मन और शरीर से स्वस्थ रहो ।'

लाली मुर्गी ने कहा-'चुलबुल तुम सदैव अपने माता-पिता और गुरुजनों का कहना मानो, सम्मान करो । उनका आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहे ।'

मिक्की बतख बोली-'चुलबुल भैया ! तुम खूब बहादुर बनो । अपने अच्छे कामों से सदा प्रसिद्धि पाओ ।'

इसके बाद चंचल गिलहरी बोली-'भाइयो और बहिनो ! हम जन्मदिन इसलिये मनाते हैं कि अच्छे बन पायें । इस दिन हम अच्छे कार्य करने का व्रत लें, फिर पूरे वर्ष वह कार्य करते रहें । मैं भतीजे चुलबुल से आग्रह करूँगी कि आज के इस शुभ दिन वह एक बुराई छोड़े और एक अच्छाई अपनाये ।'

चंचल गिलहरी के इस कथन पर सभी ने तालियाँ बजाकर प्रसन्नता प्रकट की । चुलबुल की माँ बोली–'चुलबुल बेटे ! आज के इस शुभ दिन पर तुम अपनी एक बुराई छोड़ दो ।'

चुलबुल कुछ सोचता रहा । फिर बोला–'माँ ! तुम्हीं बताओ, आज कौन–सी बुराई छोड़ने का व्रत लूँ ।'

चुलबुल की माँ मीना कहने लगी–'तुम सुबह देर तक सोते रहते हो । प्रतिज्ञा करो कि अब तुम जल्दी उठोगे । सूर्योदय के बाद नहीं सोओगे । सुबह देर तक सोने से कोई फायदा नहीं है । उससे हानि ही हानि है ।'

चुलबुल ने सभी के सामने प्रतिज्ञा की कि अब वह प्रातःकाल जल्दी उठा करेगा ।

प्रकाश खरगोश बोला–'बेटे ! गिलहरी बुआ के अनुसार तुम एक अच्छाई का पालन करने की प्रतिज्ञा और लो ।'

चुलबुल खरगोश थोड़ी देर तक सोचता रहा फिर बोला–'मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि सभी की सहायता किया करूँगा ।'

सभी को चुलबुल की बात सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई । मोनी बकरी बोली–'चुलबुल तुम बड़े होकर खूब अच्छे बनो । हम सबका यही आशीर्वाद है ।'

इसके बाद प्रीतिभोज हुआ । मीना और प्रकाश ने सभी को शानदार दावत दी । बेर, गाजर, अंगूर, चेरी और न जाने कितनी ही चीजें खिलायीं । अतिथियों ने बड़े प्रेम से वे सारी चीजें खायीं । मेहमानों ने मीना की कुशलता की बड़ी प्रशंसा की ।

दावत के बाद कलिया कोयल ने सबको गाना सुनाया । चुलबुल खरगोश ने अतिथियों को अपना नाच दिखाया । सब का खूब मनोरंजन हुआ । फिर प्रकाश और मीना ने सभी अतिथि जानवरों को थोड़े–थोड़े अंगूर उपहार में देकर विदा किया । ○

शालू बकरी

शालू बकरी की माँ रोज सुबह जंगल की ओर चली जाती थी । घर पर रह जाती थी अकेली शालू । शालू का मन करता था कि वह भी बाहर घूमे । शालू चाहती थी कि उसके भी मित्र बनें, पर शालू की माँ की आज्ञा थी कि वह घर से बाहर कहीं भी न जाये । उसकी माँ कहती थी कि वह अभी छोटी है और घर से बाहर निकलने पर उसकी सुरक्षा नहीं है । उसे कालू भेड़िया खा सकता है, भासुरक सिंह पकड़ सकता है और भी न जाने किस-किस के नाम माँ गिनाती थी । । इन सबसे शालू बकरी इतनी डर गयी थी कि वह घर से बाहर निकलने की हिम्मत ही नहीं करती थी ।

एक दिन माँ ने शालू को डाँट दिया । शालू मन ही मन खूब गुस्सा हुई । सोचने लगी-'ठीक है आज मैं बाहर चली चाऊँगी । आज मैं माँ की बात नहीं मानूँगी ।'

उस दिन माँ के घर से निकलते ही शालू भी गुफा से बाहर आ गयी । आज घूमकर मानो माँ से बदला लेना चाहती थी । उसे उसकी माँ ने डाँटा जो था ।

शालू बकरी को गुफा से बाहर निकलकर बहुत अच्छा लगा । ठण्डी-ठण्डी हवा बह रही थी । मीठी-मीठी खुशबू आ रही थी । हरे-भरे वृक्ष खड़े थे । उसने जी भरकर ताजी-ताजी पत्तियाँ खूब ही खायीं । फिर वह ठण्डा-ठण्डा पानी पीने एक झरने पर चली गयी ।

झरने पर भेड़ का बच्चा भी बैठा था। शालू ने उससे नमस्ते की, फिर पानी पिया। भेड़ के बच्चे ने पूछा–'तुम यहाँ रोज आती हो क्या ? क्या नाम है तुम्हारा ?'

'मेरा नाम शालू है। मैं आज यहाँ पहली बार आयी हूँ। मेरी माँ मुझसे घर से निकलने को मना करती है।' शालू यह सब एक साँस में कह गयी।

'ओह ! मेरी माँ भी मुझसे रोज मना करती है, पर मैं तो हर रोज घूमने आता हूँ। उन्हें पता भी नहीं लगता। खुली हवा में घूमने से मेरी सेहत भी अच्छी हो गयी है।' भेड़ का बच्चा शान से अपने शरीर पर निगाह डालते हुए बोला।

शालू ने भी अपने शरीर पर निगाह डाली। वह तो बहुत ही दुबली–पतली थी। तभी भेड़ का बच्चा तुरन्त बोल उठा–'शालू ! तुम भी इसी तरह रोज–रोज घूमने आया करो। मेरी ही भाँति खूब मोटी हो जाओगी।'

'पर मेरी माँ तो मना करती है।' शालू बोली।

'ओह ! तो माँ के पीछे आ जाया करो। मैं भी तो ऐसा ही करता हूँ।' भेड़ के बच्चे ने समझाया।

अब तो शालू हर रोज यह प्रतीक्षा करती थी कि कब माँ घर से निकले और कब वह बाहर जाये। माँ को उसने इस बारे में कुछ भी नहीं बताया था।

तीन–चार दिन तक दोनों सुरक्षित घूमते रहे। अब उनका भी साहस बढ़ गया था। दोनों ही सोचते थे कि अब हम बहुत होशियार हो गये हैं। हम जब चाहें कहीं अकेले आ–जा सकते हैं। अब वे दूर–दूर तक घूमने जाने लगे।

एक दिन दोनों घूमते–घूमते अचानक शेर की गुफा की ओर जा पहुँचे। वहाँ शेरनी अपने चार छोटे–छोटे बच्चों

को शिकार करना सिखा रही थी । उसका सबसे छोटा बच्चा शालू को देखकर बोला-माँ ! इस पर बार करके बताओ ।' तब तक शेरनी के दूसरे बच्चे ने अपने पंजे से उस पर प्रहार कर दिया ।

यह देखकर भेड़ का बच्चा शालू चुपचाप वहाँ से भाग गया । आपत्ति में पड़े मित्र की ओर से उसने मुँह फिरा लिया ।

उस दिन शेर का बच्चा शालू बकरी को फाड़ ही डालता, पर उसके सौभाग्य से तभी शेर आ गया । वह एक बड़ा-सा भेड़िया घायल करके लाया था । शेरनी और उसके बच्चों का सारा ध्यान उस ओर बँट गया । शालू बकरी सबकी आँच बचाकर चुपचाप ही वहाँ से खिसक आयी ।

पेड़ों की आड़ में छिपती हुई, सिर पर पैर रखकर वह तेजी से भागी जा रही थी । उसका नन्हा दिल भय के कारण तेजी से धड़क रहा था । उसकी पीठ से खून निकल रहा था । जैसे-तैसे वह झरने के किनारे पहुँची । वहाँ भेड़ का बच्चा पहले से ही बैठा था । उसे देखकर शालू ने मुँह फिरा लिया । भेड़ का बच्चा बोला-'मैं तो तुम्हें उससे बचा नहीं सकता था । इसलिए मैं हाथी दादा को बुलाने आया था ।'

शालू बोली-'रहने दो भाई ! अब झूठ बोलने की जरूरत नहीं । सच्चा मित्र वही है जो मुसीबत में काम आता है । जो अपने साथी को दुःख-मुसीबत में छोड़कर चला जाता है, वह नीच है, दुष्ट है, कायर है । ऐसे मित्र से तो मित्र का न होना ही अच्छा है । आज से हमारी-तुम्हारी मित्रता खत्म हुई ।'

इतनी ही देर में झाड़ियों के पीछे से श्यामा बिल्ली निकल आई । वह भेड़ के बच्चे की ओर इशारा करते हुए

बोली–'तुम ठीक ही कह रही हो । यह तो दोस्ती के लायक है ही नहीं । इसने मेरे से भी धोखा किया है ।'

श्यामा ने शालू की पीठ का खून झरने से पानी ला–लाकर धोया । फिर पेड़ों की पत्तियाँ रखकर पट्टी बाँधी । तब कहीं जाकर खून निकलना बन्द हुआ । श्यामा शालू को घर तक छोड़कर आयी । शालू मन में सोच रही थी–'श्यामा मुझसे अपरिचित है । फिर भी मेरी कितनी सहायता कर रही है । यह तो इसकी बड़ी महान् सज्जनता है । सज्जनता और मधुरता का व्यवहार ही दूसरे को अपना मित्र बनाते हैं ।'

शालू को घर छोड़कर श्यामा लौट आयी । शालू की माँ आई तो बोली–'मुझे रास्ते में ही पता लग गया था कि आज हमारी बिटिया घूमने निकली थी और बच कर आ गयी है ।'

'माँ ! मुझे माँफ कर दो । अब मैं तुम्हारी आज्ञा के बिना कहीं भी नहीं जाऊँगी ।' शालू माँ के पैर पकड़कर बोली ।

'शालू ! जो बच्चे अपने माता–पिता का कहना नहीं मानते वे हमेशा दुःख पाते हैं । हम डाँटते हैं तो तुम्हारे भले के लिये ही डाँटते हैं । जो बच्चे अपने माता–पिता का कहना मानते हैं वे ही अच्छे बनते हैं ।' शालू की माँ उससे कह रही थी ।

'माँ मैं अब सदा तुम्हारा कहना मानूँगी । अब मैं अच्छी बनूँगी ।' शालू माँ से लिपटते हुए बोली ।

अब शालू सदा अपनी माँ का कहना मानती है । श्यामा बिल्ली अब उसकी पक्की सहेली बन गयी है और उसके घर आती–जाती रहती है ।



कपिला लोमड़ी

अमरकण्टक वन में कपिला नाम की एक लोमड़ी रहती थी । वह बड़ी ही चालाक और घमण्डी थी । खरगोश, चूहे, मुर्गी, मेमनों आदि को वह मार कर खा जाया करती थी । वह बड़ी फुर्तीली थी, इसलिये तुरन्त शिकार कर लेती थी ।

एक दिन कपिला ने कई मुर्गियाँ मारीं । कुछ मुर्गियाँ उसने खा लीं । जब उसका पेट भर गया तो बची हुई मुर्गियाँ लेकर वह बरगद के पेड़ के पास पहुँची । वहाँ उसने जमीन में गड्ढा खोदा और वे सब बची मुर्गियाँ उसमें दबा दीं ।

चंचल गिलहरी पेड़ पर से कपिला की ये सारी हरकतें देख रही थी । जैसे ही कपिला चलने को हुई वह तुरन्त पेड़ से उतरी और बोली–'कपिला दीदी ! बुरा न मानना । तुम तो कहती हो कि तुम बहुत शक्तिशाली हो, पर तुम शिकार करती हो इन छोटे–छोटे निरीह प्राणियों का । सिंह दादा की तरह तुम भी बड़े–बड़े जानवरों को मारो, तब जानूँ तुम्हारी शक्ति । अपने से छोटों को तो सताना बहुत सरल होता है ।'

चंचल की यह बात कपिला लोमड़ी को काफी चुभ गयी । वह घमण्ड में अकड़ कर बोली–'अरी चंचल ! तुझे क्या पता कि मैं बड़े–बड़े जानवरों का शिकार करती हूँ । फिर वह गर्व से अपनी भुजाओं को अकड़ाते हुए बोली–'बहुत शक्ति है मेरी इन भुजाओं में ।'

'तो फिर अपनी इस शक्ति का प्रदर्शन सभी के सामने करो न किसी दिन ।' चंचल ने उसे भड़काया ।

चंचल और कपिला बात कर रही थीं कि तब तक कहीं से कल्लू गधा, लालू बन्दर, श्यामा चिड़िया आदि बहुत से अन्य जानवर भी इकट्ठे हो गये थे । शालू बन्दर बड़ा चंचल था । लोमड़ी से बोला–'तो फिर मौसी कब दिखाओगी अपनी कुशलता ?'

लोमड़ी के मुँह से बात निकल चुकी थी । भरी पंचायत में अब कपिला लोमड़ी अपनी बात से पीछे भी कैसे हट सकती थी ? सहसा उसके दिमाग में एक युक्ति सूझी । वह बोली–'अभी तो मैं अपनी बहिन के घर जा रही हूँ । आज से ठीक एक महीने बाद इसी वृक्ष के नीचे अपनी शक्ति दिखाऊँगी ।'

सभी जानवर वहाँ से तितर–बितर हो गये । लालू बन्दर सभी के घर जाकर यह बात बता आया ।

कपिला लोमड़ी उसी दिन पास के जंगल में चली गयी । वहाँ भासुरक सिंह रहता था । शिकार करने में वह बड़ा कुशल था । कपिला उसकी गुफा के पास जाकर छिप गयी । वह बड़े ध्यान से देखती रहती थी कि सिंह अपने बच्चों को किस प्रकार से शिकार करना सिखाता है ।

कपिला ने ध्यान दिया कि सिंह शिकार के लिये सबसे पहले जानवरों की गर्दन पर झपटता है । कपिला ने सोचा बड़े जानवरों का शिकार करने का यही तरीका है । सिंह के पंजे की एक बड़ी चोट से बड़े जानवरों को गिरा देता था । कपिला सोचने लगी कि यह तरीका तो बड़ा सरल है । मैं भी अब बड़े–बड़े जानवरों को मार सकती हूँ ।

बड़े ही आत्म–विश्वास के साथ निर्धारित समय पर कपिला बरगद के पेड़ के नीचे पहुँची । वहाँ लालू बन्दर और चंचल गिलहरी ने बहुत से जानवरों को इकट्ठा कर रखा था ।

दूर से हाथी दादा को आता देखकर लालू बन्दर

बोला–'तो कपिला दीदी ! अब हाथी दादा का ही शिकार करके दिखाओ ।'

'ठीक है, ठीक है ।' अपने मुँह को कुछ फुलाती हुई कपिला लोमड़ी बोली ।

हाथी जैसे ही पास आया, कपिला ने उसके मस्तक पर बार किया । हाथी ने अपनी सूँड़ बढ़ाई और लोमड़ी को जमीन पर दे पटका । लोमड़ी कराह उठी । उसकी दो–चार हड्डियाँ टूट गयीं । कमर को सहलाती हुई कपिला बड़ी मुश्किल से उठी ।

'हाथी दादा की जय' 'हाथी दादा की जय' के नारों से सारा जंगल गूँज उठा ।

कुल्लू गधा बोला–'देखा कपिला दीदी ! घमण्डी को कैसा फल मिलता है ?'

लालू बन्दर बोला–'तुम्हें सबक इसलिये दिया गया है कि तुम छोटे प्राणियों को बहुत मारने लगी हो । खाती हो फिर बचे हुओं को गाड़ भी देती हो । आज से तुम कीड़े–मकोड़े खाया करोगी ।'

चंचल गिलहरी कह रही थी–'कपिला दीदी ! देखा तुमने कि आवेश में काम करने का क्या फल मिलता है । हमें हर स्थिति में शान्ति और विवेक से काम लेना चाहिये । तनिक–सी बात पर उत्तेजित हो जाना मूर्खता की निशानी है । इस मूर्खता से दूसरों की कम और अपनी हानि अधिक होती है ।

कपिला लोमड़ी सिर झुकाये हुए चंचल गिलहरी की बात सुन रही थी । वह सोच रही थी कि ये सब ठीक कह रहे हैं ।

अब कपिला लोमड़ी अपनी शक्ति के घमण्ड में जानवरों को नहीं सताती । वह स्वभाव को भी संतुलित रखती है । बात–बात में उत्तेजित नहीं होती ।



बर्र का उपदेश

सुन्दर कानन में भासुरक नाम का शेर रहता था । एक दिन उसने एक भालू को मारा । फिर वह भालू को खींचकर अपनी गुफा में ले आया । गुफा में शेर के छोटे-छोटे बच्चे थे । शेर उन्हीं को शिकार सिखाने के लिये भालू को मारकर लाया था ।

शेर अपने बच्चों को दाँत से नोंचने और पंजे मारने का एक अभ्यास करा रहा था । वे दोनों ही बच्चे बड़े ध्यान से शिक्षा ग्रहण कर रहे थे ।

उधर कई दिनों से शेर की गुफा में एक बर्र भी अपना छत्ता बना रही थी । गुफा में एक ऐसा छेद था जो नीचे दीवाल तक खुला था । उसी में बर्र अपने रहने का इन्तजाम कर रही थी । बर्र छेद में से नीचे से ही मकड़े को पकड़ लाती । फिर उसे मूर्छित बनाती, तब उसे अपने घर में ठूँसने का प्रयास करती । बर्र छेद में बहुत से मकड़े ठूँस रही थी ।

शेर कई दिनों से बर्र की यह हरकत देख रहा था । पर वह उसकी मूर्खता पर चुप था । आज जब शेर बच्चों को शिक्षा दे रहा था तो बर्र भी बर्र-बर्र करती घण्टों से शोर मचा रही थी । कभी वह गुफा के किसी कोने में घूमती तो कभी शेर के सिर के सिर के ऊपर भिनभिनाती ।

यह देखकर शेर को बहुत गुस्सा आया । वह बोला-'अरी मूर्खा ! तुझे क्या दीखता नहीं कि तू किसके घर

में है ? क्या आज ही आफत आयी है ? क्या आज तू मेरे हाथों मरना चाहती है, जो यों आसपास मँडरा रही है । चल भाग यहाँ से, नहीं तो आज तुझे कुचल–मसलकर डाल दूँगा ।'

बर्र बोली–'भाई ! यह गुफा न तो तुम्हारी है न मेरी है । जंगल में यह गुफा बनी है । इस पर जैसा तुम्हारा अधिकार है वैसा ही मेरा भी है । मैं तुम्हारा बिगाड़ ही क्या रही हूँ ? तुम्हें मुझे यहाँ से भगाने का अधिकार भी क्या है ?'

बर्र की बात सुनकर शेर आपे में न रहा । उसने दौड़कर दीवाल पर बैठी बर्र को अपने पंजे से मारना चाहा । परन्तु वह फुर्र से उड़ गयी और उसने शेर को कई जगह से काट लिया ।

अब तो भासुरक दर्द के मारे चिल्लाने लगा । अपमान का कड़वा घूँट भी उसे पीना पड़ा । वह सोचने लगा कि इतना शक्तिशाली होकर, जंगल का राजा होकर भी मैं एक अदना–सी बर्र से हार गया । पर वह कर भी क्या सकता था ? उड़ तो वह सकता ही नहीं था । उसके मुँह पर उसने कई जगह काट लिया था और उसका मुँह फूल–फूलकर कुप्पा–सा हुआ जा रहा था ।

बर्र अब गुफा की छत पर जा बैठी । वहीं से वह कहने लगी–'भासुरक भाई ! तुम चाहे कितने ही बड़े क्यों न हो, जंगल के राजा ही क्यों न हो, पर बात करने की सभ्यता तुम में बिल्कुल भी नहीं है ? कोई भीतर से कैसा है ? इसका परिचय उसके व्यवहार से ही मिलता है । व्यवहार से जो परिचय मिलता है, वही उसका सच्चा परिचय होता है । जो कर्कश स्वर में बोलता है, वह असभ्य होता है । ऐसा प्राणी दूसरों पर अपना बड़प्पन नहीं छोड़ता अपितु वह तो ओछापन ही दिखाता है । कड़ुवा बोलने वाले के सभी प्रायः शत्रु ही बन जाते हैं ।

दर्द से कराहता हुआ सिंह चुपचाप मुँह लटकाये हुए बर्र का उपदेश सुन रहा था । बर्र फिर कहने लगी–'तुम्हें काटने की मेरी इच्छा तो तनिक भी न थी, पर तुम्हें यही शिक्षा देने के लिये मैंने काटा था कि न कोई छोटा है न बड़ा । सभी की अपनी अलग–अलग शक्ति–सामर्थ्य है । हम अपने अहंकार के गर्व में किसी का भी तिरस्कार न करें ।'

भासुरक की समझ में अब अपनी गलती आ गयी थी । वह बोला–'बहिन ! अहंकार वश मैंने तुमसे जो कुछ भी कहा है उसके लिये मुझे माफ कर दो । तुम शरीर से छोटी हो तो क्या हुआ, हो तो बड़ी ही ज्ञानी । अब मैं किसी के साथ दुर्व्यवहार न करूँगा ।'

बर्र कहने लगी–'भाई ! ऐसा कहना तुम्हारे बड़प्पन के ही अनुरूप है । अपनी गलती को स्वीकार करना और उसे दूर करने का प्रयास करना महानता है ।'

'बर्र बहिन ! अब तुम कहीं मत जाना । इस गुफा में ही आराम से रहना । तुम ठीक ही कहते हो कि कोई वस्तु किसी एक की नहीं होती । सभी को मिल–जुलकर इसका उपयोग करना चाहिये ।' सिंह भासुरक विनीत स्वर में बोला ।

अब भासुरक का व्यवहार जंगल के अन्य जीव–जन्तुओं के साथ भी बदल गया है । वह सबसे विनय भरा व्यवहार करता है । और बदले में सबका सद्भावना भरा स्नेह पाता है ।



मीठे अंगूर

अमरकण्टक वन में तरह–तरह के फलों के वृक्ष लगे हुए थे । चीनू बन्दर के वहाँ सबसे अधिक आनन्द थे । कभी वह आम खाता था तो कभी अमरूद । कभी किसी पेड़ पर बैठा रहता तो कभी किसी पेड़ पर ।

आप के पेड़ पर अंगूरों की एक बड़ी सुन्दर बेल फैली हुई थी । उसके रस भरे बड़े–बड़े पीले–हरे उन अंगूरों की सारे जंगल भर में प्रसिद्धि थी । कलिया कोयल, हरियल तोता, चानी चिड़िया, चीनू बन्दर आदि बहुत से अन्य पक्षी उस वृक्ष पर सारे दिन ही बैठे रहते थे ।

एक दिन अमरकण्टक वन में पास के जंगल से एक लोमड़ी आ गयी । उसका नाम था वाणी । अमरकण्टक वन में वाणी की बहिन रहती थी । उसी से मिलने वह यहाँ आयी थी ।

चलते–चलते वाणी थक गयी । थक कर वह आम के पेड़ के नीचे बैठ गयी । ठण्डी–ठण्डी हवा ने उसकी सारी थकान दूर कर दी । सहसा ही वाणी की निगाह पेड़ के तने पर पहुँची । उस पर बड़ी सुन्दर अंगूरों की बेल चढ़ी हुई थी ।

रसभरे सुन्दर–सुन्दर, गोल–मटोल अंगूरों को देखकर वाणी के मुँह में पानी भर आया और उसकी लार टपकने लगी ।

वाणी ने अंगूरों पर छलांग लगायी, पर अंगूर ऊँचाई पर लगे थे । उसका छलांग लगाना बेकार गया । वाणी का

बार–बार ही कूदना देखकर पेड़ पर बैठी कलिया कोयल, हरियल तोता, चानी चिड़िया और चीनू बन्दर सभी हँस पड़े ।

वाणी की जीभ चटकारे भर रही थी । अंगूर पाने के लिये बेताव हो रही थी । उसने देखा कि पेड़ पर बैठा पक्षियों का झुण्ड आराम से अंगूरों की दावत उड़ा रहा है ।

वाणी ने सोचा कि मैं अंगूरों तक तो पहुँच नहीं पाऊँगी । पेड़ पर बैठे इन पक्षियों से ही माँग लेती हूँ । वह कलिया कोयल से बोली–'कलिया बहिन ! कृपा करके दो–चार अंगूर मेरे लिये भी गिरा दो ।'

चार बार कहने पर तो कलिया कोयल ने कहीं जाकर लोमड़ी की बात सुनी । फिर वह बोली—'ओह मौसी ! अंगूर खाने भी क्या जरूरी हैं ? कुछ और खाकर पानी पी लेना । मुझे देर हो रही है । मैं तो घर जा रही हूँ ।' इसके बाद कुहुक–कुहुक करती कलिया कोयल फुर्र से उड़कर चली गयी ।

वाणी लोमड़ी फिर चीनू बन्दर से बोली–'भैया चीनू ! मैं बड़ी थकी हुई हूँ । तुम मुझे कुछ अंगूर गिरा दो । तुम्हारी बड़ी मेहरबानी होगी ।'

चीनू बन्दर मुँह चिढ़ाकर बोला–'ओह काकी ! तुमने भी कभी किसी को अंगूर खिलाये हैं ? तुम भी किसी को कुछ देती हो ? जो दूसरों को दे नहीं सकता वह पाने का भी अधिकारी नहीं है । जो देता है वही पाता है ।'

फिर वाणी हरियल तोता से बोली–'भैया ! तुम ही मुझे कुछ अंगूर खिला दो ।'

हरियल तोता बोला–'मौसी ! एक दिन मैं तुम्हारे घर गया था तो तुमने मुझे बैठाया तक नहीं । मैं कहता–कहता थक गया कि मौसी मैं प्यासा हूँ, मुझे जरा–सा पानी पिला दो, पर तुमने मुझे एक बूँद पानी तक न दिया ।'

चानी चिड़िया बोली–'मौसी माफ करना ! हम सब मिल–जुलकर प्रेम से रहें यही अच्छा है । तुम देख ही रही हो कि हम सब पक्षी आपस में कैसे भाई–चारे से रहते हैं । तुम्हारी बुरी आदत है कि तुम दूसरों में फूट डलवा सकती हो । कभी किसी की सहायता नहीं करतीं । यही कारण है कि कोई तुम्हारी सहायता नहीं करता ।'

वाणी लोमड़ी की समझ में अपनी गलती आ रही थी । पर वह बोली–'रहने दे ! अंगूर खट्टे हैं, मैं नहीं खाऊँगी ।'

चानी चिड़िया करने लगी–'नहीं मौसी ! अंगूर खट्टे तो नहीं हैं । अमरकण्टक वन के ये अंगूर तो दूर–दूर तक प्रसिद्ध हैं । तुम्हारे लिये मैं कुछ अंगूर गिराऊँगी । उन्हें खाकर देखना तब बताना कि ये कैसे हैं ? पर पहले वायदा करो कि तुम भी सबकी सहायता किया करोगी, सबके साथ प्रेम से रहोगी ।'

वाणी भी अपनी गलती समझ रही थी । उसने सभी के सामने प्रतिज्ञा की कि अब वह सभी से सज्जनता का व्यवहार करेगी । सभी के साथ मिल–जुलकर रहेगी, दूसरों की सहायता करेगी ।

उसकी इस प्रतिज्ञा की खुशी में हरियल तोता, चानी चिड़िया, चीनू बन्दर सभी ने पेड़ से खूब सारे अंगूर गिराये ।

बड़े ही मीठे थे अंगूर ! वाणी ने उन्हें चटखारे ले–लेकर खाया । जो बचे वह अपनी बहिन के लिये पोटली में बाँध लिये ।

पहले वाणी सभी से कहती थी कि अमरकण्टक वन के अंगूर बड़े खट्टे हैं । क्योंकि वह किसी भी तरह उनको पा नहीं सकती थी । अब वह सभी से कहती है कि ये अंगूर बड़े अच्छे हैं । सहयोग–संगठन से वाणी के लिये खट्टे अंगूर भी मीठे बन गये ।

चंगू-मंगू चले घूमने

चुनचुन चूहे के दो छोटे-छोटे बच्चे थे । यों उन्होंने अभी-अभी चलना सीखा था, पर थे वे बड़े शरारती । सारे दिन कुछ न कुछ उछल-कूद मचाते ही रहते थे । पल भर भी वे चैन से नहीं बैठ सकते थे । चुनचुन चूहा उनकी शरारतों से तंग आ गया । कभी वे एक-दूसरे से ही लड़ने लगते । कभी बिल से बाहर जाने लगते । चुनचुन चूहा उन्हें समझाता रहता ।

चुनचुन चूहा बार-बार उन्हें बताता कि तुम दोनों अभी बहुत छोटे हो । बिल से बाहर न जाया करो । बड़ी मुश्किल से वह उन्हें घर में रोके रखता ।

एक दिन की बात है । चुनचुन चूहा खाना लेने बाहर चला गया । उसका बड़ा बेटा चंगू अपने छोटे भाई से बोला-'मंगू ! आज तो घर में बैठे-बैठे बड़ी घुटन-सी लग रही है । चलो बाहर ही घूमने चलें ।

मंगू बोला- 'भैया ! पिताजी तो बाहर जाने के लिये मना करते हैं । वह वापिस लौटकर आयेंगे और हमें घर पर नहीं देखेगें तो नाराज होगें ।'

'पर हम तो जरा-सी देर को जायेंगे । पिताजी के लौटने से पहले ही घर वापिस आ जायेंगे ।' चंगू बोला ।

मंगू भी चंगू की बातों में तुरन्त आ गया । अब वे दोनों ही घूमने बाहर निकले ।

बिल से बाहर आकर उन्हें बहुत अच्छा लगा । वे चिन्मय के सारे घर में घूमें । खाने की मेज पर दोनों भाई चढ़

गये । वहाँ चंगूमंगू ने छककर दावत उड़ाई । तरह-तरह की मिठाइयाँ और फल खाये । उन्होंने इतना अधिक खा लिया था कि उनसे चला भी नहीं जा रहा था । तभी चिन्मय और उसकी माँ खाना खाने आ गये । विवश होकर चंगूमंगू को मेज पर से उतरना ही पड़ा ।

मेज से उतरकर दोनों धीरे-धीरे अपने बिल की ओर बढ़ने लगे । पर रास्ते में उन्होंने देखा कि बिल्ली चिन्मय की पालतू थी । वे दोनों सोचने लगे कि आज तो हमारी खैर नहीं । आज तो निश्चित रूप से हम मरे ।

मंगू अपनी मूँछों को हिलाता हुआ चंगू से कहने लगा-'भैया ! आज तुम्हारी बात मानने का ही यह फल मिला है । न तुम कहते, न हम बाहर आते । पिताजी की बात मान लेते तो यों हमें मौत के मुँह में न जाना पड़ता । बड़ों की बात मानने का यही फल होता है ।'

चंगू बोला-'हाँ ! यह बात तो मैं भी समझ पा रहा हूँ कि हमें पिताजी की आज्ञा पालन करना चाहिये । परन्तु इस समय तो अब धैर्य रखो ।'

'मौत सामने खड़ी है और तुम मुझसे धैर्य रखने की कहते हो ।' मंगू झुँझलाते हुए बोला ।

'भाई ! अधीरता से तो कोई काम चलेगा नहीं । धैर्यपूर्वक स्थिति पर विचार करने से ही संकट दूर होगा ।' चंगू सोचता हुआ बोला ।

'पर मेरी तो बुद्धि ही काम नहीं कर रही है ।' सिर खुजलाते हुए मंगू कह रहा था ।

चंगू ने समझाया-'भाई ! विपत्ति में जो सोच-विचार कर कार्य करता है, वह निश्चित ही विपत्ति को दूर भगा देता है । इसलिये विचारों को संयमित रखो ।'

फिर चंगू ने मंगू को एक उपाय बताया । वह बोला–'अब हम साथ–साथ ही चलेंगे । तुम दाहिनी तरफ से बिल की ओर जाना और मैं बाँयी ओर से आऊँगा । इस प्रकार बिल्ली का ध्यान विभाजित हो जायेगा । उसे चकमा देते हुए हम बिल में घुस जायेंगे । यदि मरेगा भी तो एक ही भाई मरेगा । क्योंकि इस प्रकार बिल्ली एक ही ओर झपट्टा मार सकेगी । एक भाई तो बिल में सुरक्षित पहुँच जायेगा । वही पिताजी को सारी बात बता देगा ।'

यह बात मंगू को भी पसन्द आ गयी । अब दोनों तेजी से दो ओर से बिल की तरफ बढ़े । बिल्ली ने मंगू पर झपट्टा मारा । तभी चंगू पीछे से बिल्ली पर फुदक पड़ा । बिल्ली चौंक पड़ी, उसका पंजा ढीला पड़ गया । इतने में पंजे में फँसा मंगू दौड़कर बिल में घुस गया । बिल्ली ने जितनी देर में पीछे मुड़कर देखा उतनी देर में चंगू भी बिल में घुस चुका था ।

इस प्रकार से जैसे–तैसे चंगू–मंगू की जान बची । मंगू के शरीर पर कई जगह कुछ खरोंच भी आ गयी थीं । चंगू ने उन खरोंचों पर दवा लगायी ।

अब दोनों भाइयों ने अपने कान पकड़े और निश्चय किया कि जब तक वे बड़े नहीं हो जायेंगे और जब तक पिताजी उन्हें आज्ञा नहीं देंगे तब तक वे बिल से बाहर नहीं निकलेंगे ।



श्वेता की उतावली

पीयूष के घर एक पालतू बिल्ली थी । वह सफेद रंग की थी । इसीलिये सबने उसका नाम श्वेता रख लिया था । श्वेता घर के सदस्य की ही भाँति रहती थी । वह शान से अपनी गर्दन उठाकर घर भर में घूमती रहती थी । निडर भाव से वह अपनी मालकिन शालिनी की गोद में चढ़ जाती । वे प्यार से उसकी पीठ थपथपातीं । श्वेता अपनी आँखों को आधा खोलकर, उसके स्नेह के प्रति 'म्याऊँ–म्याऊँ' कहकर प्रसन्नता व्यक्त करती ।

श्वेता को दूध और उससे बनी चीजें बहुत पसंद थीं । उसकी यह पसन्द शालिनी को भी पता थी । इसलिये वह उसे रोज दूध तो देती ही थी, पर जब भी घर में खीर, गाजर का हलुआ, छेने की मिठाई बनती तो श्वेता बिल्ली को भी वह जरूर दी जाती ।

एक दिन शालिनी का बेटा राहुल माँ से बोला–'माँ ! आज तो मैं खीर खाऊँगा । स्कूल से लौट आऊँ उससे पहले खीर जरूर बनाकर रखना ।'

दोपहर के समय शालिनी ने रसोईघर में जाकर खीर बनानी प्रारम्भ की । श्वेता बिल्ली उस समय बगीचे में उछल–कूद कर रही थी । उसकी नाक में खीर पकने की सौंधी–सौंधी गन्ध गयी । वह वहाँ से तुरन्त दौड़ी आयी । उसने देखा कि मालकिन रसोई में बैठी कुछ पका रही हैं । वह दरवाजे पर खड़ी होकर म्याऊँ–म्याऊँ करके खीर माँगने लगी । शालिनी श्वेता बिल्ली को कभी रसोई के अन्दर न आने देती थी । इसलिये वे दरवाजे पर ही खड़ी बोल रही थीं ।

'अरी ! खीर तो पक जाने दे । इतनी उतावली क्यों हो रही है, तुझे क्या मिलेगी नहीं ?' शालिनी ने बैठे–बैठे कहा ।

श्वेता की समझ में कुछ बात आयी, कुछ नहीं । पर वह रसोई के दरवाजे से हट गयी । वह बरामदे में इधर–उधर घूमते चूहों के पीछे दौड़ने लगी । फिर कुछ देर तक चुपचाप आँखें बन्द करके ही बैठी रही । पर उससे देर तक चुप न बैठा गया । खीर की गन्ध जैसे–जैसे उसकी नाक में घुसती जा रही थी वह बेचैन होती जा रही थी । श्वेता फिर रसोईघर के दरवाजे पर म्याऊँ–म्याऊँ करने लगी ।

खीर बन चूकी थी, पर वह बहुत गर्म थी । शालिनी बोली–'श्वेता अभी थोड़ा–सा रुक जाओ ।' शालिनी रसोईघर के दरवाजे से निकली तो श्वेता भी उसके पीछे–पीछे चलने लगी । उसकी साड़ी का पल्ला खींचने लगी ।

शालिनी ने देखा कि श्वेता खीर खाने के लिये बड़ी उतावली है तो उसने एक कटोरी में खीर डाली । उसमें से गर्म–गर्म भाप निकल रही थी । शालिनी ने कटोरी जमीन पर रखकर समझाया था––'अभी बहुत गर्म है । ठण्डी होने पर खाना ।'

इतने में शालिनी की कोई सहेली आ गयी और वह दूसरे कमरे में जाकर उससे बातें करने लगी ।

इधर श्वेता ने उतावली में कटोरी में अपना पंजा मारा । खीर जमीन पर लुढ़क गयी । पंजे से छूने पर श्वेता को कटोरी विशेष गर्म न लगी । उसने जल्दी से जमीन पर लुढ़की हुई खीर खाने के लिये मुँह मारा । खीर से इतनी अच्छी सुगन्ध आ रही थी कि श्वेता अपने को रोक ही नहीं पा रही थी । वह सोच रही थी कि जरा–सी चख लेने में क्या हर्ज है ?

श्वेता ने जल्दी में खीर से जैसे ही जीभ लगायी तो वह तुरन्त बहुत बुरी तरह जल गयी । 'ओह ! यह तो बहुत गर्म है ।' श्वेता ने मन ही मन कहा ।

खीर की गन्ध उसके नथुनों में बुरी तरह भर चुकी थी । वह धैर्य न रख सकी और अपने पंजों को इधर-उधर पटकने लगी । उसका पंजा लगने से पास में रखी पानी की कटोरी लुढ़क गयी । पानी और खीर दोनों मिलकर एक हो गये ।

पानी मिलने से खीर ठण्डी हो गयी थी, पर उसका स्वाद समाप्त हो गया था । श्वेता को खीर बड़ी फीकी और नीरस लग रही थी । अब वह अपनी जल्दबाजी पर पछताने लगी । न वह इतनी जल्दी मचाती और न खीर बेकार होती । जमीन पर से पानी मिली खीर चाटकर श्वेता ने खीर की कटोरी चाटी । कटोरी के किनारों पर जरा-सी खीर लगी रह गयी थी । उसे ही खाकर उसकी जीभ चटखारे भरने लगी ।

श्वेता मन में सोच रही थी कि न मैं आज इतनी जल्दबाजी करती और न इतनी अच्छी खीर खाने से वंचित रहती । किसी ने सच ही कहा है कि जल्दबाजी और उतावलेपन में काम सदैव ही बिगड़ता है । जो धैर्य और शान्ति से कार्य करता है वही सफलता पाता है ।



नकल का फल

राहुल चार वर्ष का था, पर था वह बड़ा ही शरारती । वह न तो चुपचाप बैठ सकता था और न बिना बोले रह सकता था । हर समय कुछ न कुछ करता रहता था । नकलची भी वह बहुत था । एक बार किसी को काम करते देख लेता, बस फिर वही काम खुद करने लगता । उसने एक दिन माँ को स्टोव जलाते देखा । माँ अन्दर गयी तो राहुल खुद स्टोव जलाने बैठ गया । एक दिन उसने अपने घर में बढ़ई को लकड़ी काटते देखा । बढ़ई खाना खाने गया तो राहुल भी आरी लेकर खुद लकड़ी काटने में जुट गया । बेचारा बड़ों का हर काम करता, सभी से डाँट खाता और अपना-सा मुँह लेकर लौट आता । यह उसके माता-पिता की भी गलती थी कि वे उसे किसी ऐसे कार्य में नहीं लगाते थे जिसमें उसकी प्रतिभा का सदुपयोग हो । बच्चे को तो कुछ न कुछ काम करने को चाहिये ही । उसकी शक्ति का सदुपयोग अच्छे कार्य में नहीं कराया जायेगा तो वह गलत कार्यों में ही निकलेगी ।

राहुल को जानने की जिज्ञासा भी बहुत थी । माँ से हर समय वह कुछ न कुछ प्रश्न करता ही रहता था ।

एक बार राहुल के नानाजी आये । गाँव में रहते थे, वहाँ वे खेती करते थे । नानाजी ने चलते समय कहा-'चलो राहुल ! कुछ दिन हमारे घर रहना । रास्ते में तुम्हें बहुत-सी नई-नई चीजें भी दीखेंगी । गाँव भी तुमने कभी देखा नहीं है । वहाँ अच्छी-अच्छी चीजें खाने को मिलेंगी ।'

राहुल नानाजी के साथ जाने को तैयार हो गया । बस में उसने बहुत-सी नई-नई चीजें देखीं और वह रास्ते भर नानाजी से उनके विषय में पूछता रहा ।

राहुल घर पहुँचा तो नानी उसे देखकर बहुत खुश हुई । वहाँ राहुल के मामा का लड़का सोनल भी था । वह आयु में राहुल के बराबर था । राहुल उसके साथ खेलता रहता । राहुल का गाँव में खूब मन लग गया ।

एक दिन राहुल के नानाजी राहुल और सोनल दोनों को खेत पर ले गये । वहाँ उसने देखा कि दो सुन्दर बैल भी बँधे हैं । वे सफेद रंग के, बहुत प्यारे और सुन्दर थे । उन दोनों बैलों के नुकीले और घुमावदार सींग थे ।

'ये बैल यहाँ क्या करेंगे ?' राहुल पूछने लगा ।

'बेटे ! बैलों को हल में लगाकर हल जोता जायेगा । ये खेतों के लिये बड़े ही उपयोगी होते हैं । इनके गोबर से बहुत अच्छी खाद बनती है । घर पर चलेंगे तो इन्हें बैलगाड़ी में जोत लेंगे ।' नानाजी ने समझाया ।

राहुल खेत में बैठा-बैठा बड़े ध्यान से बैलों का हल चलाना देखता रहा । दोपहर को नानी भी खाना लेकर खेत पर ही आ गयीं । सबने मिलकर खाना खाया ।

घर चलते समय नानाजी ने बैलों को बैलगाड़ी में जोता । नानाजी, नानी, राहुल, सोनल सभी गाड़ी में बैठ गये । बैलों को हाँककर नानाजी गाड़ी आगे बढ़ाने लगे ।

'नानाजी ! ये बैल तो दो हैं । ये हम सबका और गाड़ी का इतना सारा बोझ कैसे ढो लेते हैं ?' राहुल ने बड़ी ही उत्सुकता से पूछा ।

नानाजी बोले-'ये भूसा, घास और दाना खाते हैं । इन सब चीजों में बड़ी ताकत होती है ।'

कुछ सोचते हुए से राहुल ने कहा–'हाँ ! माँ भी कहती हैं, हम जैसी चीज खाते हैं वैसे ही बनते हैं । दूध पीने से ताकतवर बनते हैं । चाट–पकौड़े आदि खाने से पेट खराब ही होता है और बीमार पड़ते हैं ।'

'हाँ राहुल ! यह बात सच है ।' नानी बोली ।

'पर माँ ने कभी यह तो नहीं बताया कि भूसा और घास खाने से ताकत बढ़ती है । उन्होंने ना ही मुझे, ना ही पिताजी को कभी ये चीजें खिलायी हैं ।' राहुल अभी भी न जाने किस सोच में डूबा हुआ कह रहा था ।

राहुल की बात सुनकर सभी खिलखिलाकर हँस पड़े ।

नानाजी बोले–'पगले ! ये चीजें तो जानवर खाते हैं ।'

तभी घर आ गया और सभी गाड़ी से उतर पड़े ।

पूरे एक दिन राहुल मन ही मन सोचता रहा कि भूसा खाने से ताकत आती है । मैं भूसा खाऊँगा तो मुझमें भी खूब–सी शक्ति आ जायेगी । फिर कोई भी भाई–बहिन उसे 'सीकिया–पहलवान' कहकर नहीं चिढ़ायेगा । पर उसे यह बात नाना–नानी से कहने की हिम्मत न पड़ी । राहुल सोच रहा था, उन्हें अगर बताऊँगा तो वे हँसेंगे ही । इसलिये जब मैं भूसा खा–खाकर पहलवान हो जाऊँगा तभी बताऊँगा ।'

दूसरे दिन शाम को राहुल चुपचाप घर के दरवाजे पर आ गया । वहाँ बैल बँधे हुए थे और अपनी–अपनी नाद में सानी खा रहे थे । राहुल ने चोर निगाहों से इधर–उधर देखा सब ठीक है । नानी रसोईघर में खाना पका रही हैं और नाना चारपाई पर बैठे अखबार पढ़ने में लीन हैं ।

तभी घर के अन्दर से सोनल आया । राहुल को चुपचाप देखकर बोला–'यहाँ क्यों खड़े हो राहुल ?'

'शी-शी चुप रहो ।' मुँह पर उँगली रखते हुए राहुल बोला ।

फिर वह सोनल के कान में बोला-'सोनल ! आज बैलों की सानी खायेंगे ।'

'पर आखिर क्यों ?' सोनल पूछने लगा ।

'ओह ! तुम जानते नहीं बैल सानी खाते हैं, इसलिये इनमें इतनी शक्ति है । हम खायेंगे तो हम भी बहुत शक्तिशाली बन जायेंगे । फिर गाँव के टीपू पहलवान को हम मिनटों में हरा दिया करेंगे ।' राहुल ने उसे समझाया ।

सोनल को भी यह तर्क अच्छा लगा । अब क्या था ? राहुल और सोनल दोनों ने ही बैलों की नाद में से घास व भूसे की सानी खानी शुरू कर दी । प्रारम्भ में उनका जी बहुत मिचलाया, मुँह में भी भूसा चुभा । पर पहलवान बनने के लालच में राहुल और सोनल ने बहुत-सी घास निगल ली ।

रात को नानी ने खाना खाने के लिये दोनों को पुकारा । पर उन्होंने कह दिया कि भूख नहीं है । राहुल और सोनल के पेट में दर्द भी होने लगा था । थोड़ी देर तक तो वे उसे सहते रहे । जब न सहा गया तो जोर-जोर से रोने लगे ।

रोने की आवाज सुनकर उनके नानाजी दौड़े चले आये । वे तुरन्त भागे-भागे डाक्टर के पास गये । डाक्टर ने उनका पेट टटोला । वह सख्त था । डाक्टर ने पूछा-'बच्चो ! तुमने क्या खाया है ? सच-सच बताओ । नहीं तो फिर इन्जेक्शन लगाना पड़ेगा ।'

इन्जैक्शन के डर के कारण राहुल और सोनल दोनों ही बोल पड़े-'डाक्टर साहब ! हमने भूसा और घास खायी है ।'

'वह क्यों ?' डाक्टर ने आश्चर्यचकित होकर पूछा ।

अब उन दोनों ने उन्हें भूसा खाने की सारी कथा विस्तार से सुना दी । उनकी बातें सुनकर डाक्टर और नाना-नानी खूब ही हँसे ।

नानाजी बोले—'बेटा ! अनुकरण सोच—समझ कर ही करना चाहिये । सब काम सबके अनुकूल नहीं हुआ करता । बिना अकल के जो नकल की जाती है वह सफल नहीं हुआ करती ।'

डाक्टर ने दोनों को कड़वी—कड़वी दवा पीने के लिये दी । उस दिन से राहुल ने अपने कान पकड़े कि अब वह किसी की नकल नहीं करेगा और अकल से काम लेगा ।

प्रायश्चित

मुक्ति बड़ी होनहार लड़की थी । वह अपनी कक्षा में सदैव प्रथम आती थी और पुरस्कार जीतती थी । यही नहीं उसके सद्व्यवहार के कारण स्कूल में सभी उससे प्यार करते थे । वह सदैव सच ही बोलती थी । साथियों से प्यारी बातें करती थी । सबकी सहायता करती थी । यह सब उसके माता—पिता की सीख का परिणाम था । उसकी माँ सोते समय अच्छी—अच्छी कहानियाँ सुनाती थी । उनसे उसे अच्छा बनने की प्रेरणा मिलती थी ।

मुक्ति अब चौथी कक्षा में आ गयी थी । वह कक्षा की मानीटर भी थी । उसकी कक्षा में इस बार बाहर से एक लड़की आयी । उसका नाम पूनम था । पूनम जल्दी ही मुक्ति की सहेली बन गयी ।

यों पूनम पढ़ने—लिखने में अधिक होशियार न थी, पर वह रोज नये—नये कपड़े पहनकर आती थी । साथियों को खूब ही चाट खिलाती थी । इससे बहुत—सी लड़कियाँ उसकी सहेली बन गयी थीं । पूनम के पिता बड़े धनी थे । वे उसे भी बहुत—सा जेब खर्च देते थे और उसे पूनम अनाप—शनाप चीजों में खर्च करती थी ।

यों जेब खर्च तो मुक्ति को भी मिलता था, पर उसकी माँ

कहा करती थी–'बेटी ! बाजार की सड़ी–गली चीजें या चाट–चाकलेट खरीदने में इसे खर्च न करना । कभी–कभी ये चीजें खा लेना, पर रोज की आदत न बनाना ।' अक्सर होता यह था कि जो भी फल या कोई चीज के लिये बच्चे कहते तो मुक्ति की माँ स्वयं ही बाजार जाकर उसे खरीद लाती या फिर घर बना लेती । फिर सब मिलकर उसे खाते ।

मुक्ति की माँ ने उसे एक सुन्दर भालू वाली गुल्लक लाकर दे दी थी । मुक्ति अपने रोज के पैसे उसमें ले जाकर डाल देती थी । कभी–कभी वह गुल्लक से पैसे निकालती थी ।

पूनम का रोज का ही काम था कि खाने की छुट्टी में वह तरह–तरह की चीजें खाया करती थी । वह अकेली ही नहीं खाती थी, अपनी सहेलियों को भी खिलाती थी । मुक्ति अपना खाना खा रही होती तो वह जबरदस्ती उसे ले जाती और कहती–'मुक्ति ! खाना तो घर पर खाते ही हैं । आओ आज गोलगप्पे खायेंगे ।'

मुक्ति कहती–'नहीं ! मैं पैसे नहीं लायी हूँ ।'

'कोई बात नहीं मैं तुम्हारे पैसे दे दूँगी ।' पूनम कहती । मुक्ति उसे समझाती कि तुम मेरे पैसे क्यों दोगी ? तो पूनम बोलती कि तुम मेरी सहेली हो न इसलिये । 'पर यह सारा खाना बेकार जायेगा ।' मुक्ति कहती । पूनम कहती वह सारा खाना लेकर रास्ते में कुत्ते को डाल देगी ।

धीरे–धीरे पूनम के साथ रहकर मुक्ति को भी बाजार की चीजों में पैसे खर्च करने की आदत बन गयी । कुछ दिन तक तो पूनम ने अपने पैसों से खिलाया फिर एक दिन बोली––'क्यों मुक्ति ! तुम्हें जेब खर्च के लिये पैसे नहीं मिलते ।'

'हाँ मिलते तो हैं ।' मुक्ति ने उत्तर दिया ।

'तो फिर तुम रोज–रोज पैसे क्यों नहीं लाती हो ?' पूनम ने पूछा ।

'मैं उन्हें जोड़ती रहती हूँ । उनसे कभी कोई चीज खरीद लेती हूँ, कभी कोई । अबकी बार अपने छोटे भाई के जन्मदिन पर उछलने वाला मेंढक खरीदूँगी ।'

'ओह मुक्ति ! तुम किस चक्कर में फँसी हो ।' रोज-रोज चीज खाने में जो मजा आता है वह पैसे जोड़ने में कहाँ आता है ।' पूनम ने सबक दिया ।

पूनम की संगति से धीरे-धीरे मुक्ति भी चटोरी बनने लगी । अब वह रोज पैसे लाने लगी । घर से लाया खाना वह किसी लड़की को दे देती तो कभी कुत्ते के आगे डाल देती । घर की चीजें अब उसे नीरस लगने लगीं ।

एक दिन मुक्ति की गुल्लक के भी सारे पैसे खर्च हो गये । वह सोच रही थी कि आज मैं चाकलेट कैसे खरीदूँगी ? तभी उसकी निगाह मेज पर रखे माँ के पर्स पर पड़ी । मुक्ति ने एक बार सतर्क निगाहों से चारों ओर देखा और फिर झट से पाँच रुपये का एक नोट निकाल लिया ।

पर्स में काफी रुपये थे । अतएव मुक्ति की यह चोरी किसी की पकड़ में न आयी । अब तो मुक्ति और भी निर्भीक बन गयी । कभी वह माँ के पर्स से पैसे निकालती तो कभी पिता की जेब से । माता-पिता परेशान थे कि आखिर रुपये कौन चुरा ले जाता है । उनका सन्देह महरी पर गया, पर महरी तो कमरे के अन्दर आती तक न थी । वह बाहर से ही काम करके लौट जाती थी । दूसरे जब महरी काम करती थी तो दादी अम्मा बाहर बरामदे में बैठी उसकी निगरानी करती थीं । मुक्ति के माता-पिता समझ नहीं पा रहे थे कि रुपये आखिर कहाँ जाते हैं ? मुक्ति और उसके भाई-बहिनों से कुछ माता-पिता पूछते तो वे भी साफ मना ही कर देते थे कि हमने तो रुपये नहीं देखे ।

एक दिन घर में बहुत से मेहमान आये थे । मुक्ति की माँ ने उसके पिताजी से कहा कि वह मेहमानों के खाने के लिये बाजार से चीजें ले आयें । पिताजी ने जल्दी से पेण्ट बदली, थैला उठाया और बाजार चल पड़े ।

बाजार में मुक्ति के पिताजी ने पहले बहुत सारे फल ख़रीदे । उन्होंने रुपये देने के लिये जेब से पर्स निकाला । पर यह क्या ? वहाँ तो एक भी रुपया नहीं था । कुछ पैसे मात्र पड़े थे, पर आज सुबह ही तो उन्होंने पाँच-पाँच के दो नोट रखे थे । अब तो उनका सर चकरा गया कि पैसे आखिर गये तो कहाँ गये ? किसने कब निकाल लिये ?

फल वाले ने मुक्ति के पिताजी को बड़ा अपमानित किया । कहा-'बाबूजी ! पहले घर पर ही अपना पर्स देख लिया कीजिये, फिर बाजार आया कीजिये । यदि खरीदने की सामर्थ्य नहीं है तो व्यर्थ में किसी भले आदमी को तंग न कीजिये ।'

मुक्ति के पिताजी अपमान का घूँट पीकर रह गये । अपना-सा मुँह लेकर वे घर की ओर बढ़ने लगे । उन्होंने समझा कि मुक्ति की माँ ने बिना कहे पैसे निकाल लिये हैं, इसलिये आते ही वे उन पर झल्लाने लगे ।

पर मुक्ति की माँ ने तो पैसे निकाले नहीं थे । उन्होंने भी कह दिया कि मैंने तो आपका पर्स छुआ तक नहीं है । घर में जो कुछ भी था वह खिला-पिलाकर मेहमानों को विदा किया गया ।

रात के समय प्रतिदिन की भाँति घर के सभी सदस्य मिल-जुलकर बैठे । मुक्ति के पिताजी ने बताया कि किस प्रकार आज उन्हें फल वाले से अपमानित होना पड़ा था । उसने किस प्रकार से उन्हें लताड़ें लगायी थीं ।

पिता के मुँह से यह सब सुनकर मुक्ति का बाल-मन

बिलख उठा । वह सोचने लगी कि मेरे कारण ही पिताजी को इतना अपमानित होना पड़ा है । वह झिझकते हुए बोली–'पिताजी ! मुझे माफ कर दीजिये । मैंने ही आज आपकी जेब से पैसे चुराये थे ।'

माँ मुक्ति को डाँटने वाली थीं, पर पिताजी ने उन्हें मना कर दिया । उन्होंने मुक्ति से सारी बातें विस्तार से पूछीं कि किस प्रकार से उसे चोरी करने की आदत पड़ी है ? मुक्ति ने सच–सच सब बता दिया । उसने अपराध स्वीकार करते हुए कहा कि पूनम के साथ रहकर ही उसे चटोरेपन की लत लगी है । इसी के कारण उसने चोरी करना सीखा है ।

मुक्ति के पिताजी बोले–'जीभ जब चटोरेपन की आदी बन जाती है तब हमारा स्वास्थ्य तो खराब होता ही है । साथ ही हम में अनेक बुरी आदतें भी आ जाती हैं । तुम देख ही रही हो कि अपनी इस आदत के कारण तुमने चोरी करना सीखा । चोरी को न खुलने देने के लिये झूठ बोलना सीखा । इस प्रकार कितनी ही गन्दी आदतें तुम में आ गयी हैं । तुम गन्दी बच्ची बन जाओगी तो फिर न हम तुम्हें प्यार करेंगे, न स्कूल में कोई तुमसे बात ही करेगा ।'

मुक्ति रोते हुए पिता से लिपट गयी और बोली–'पिताजी ! अब मैं पूनम के साथ नहीं रहूँगी । उसी से मैंने ये गन्दी आदतें सीखी हैं । अब मैं बाजार की चीजों में पैसे नहीं बिगाड़ूँगी । सुपारी और चाकलेटों के लिये चोरी नहीं करूँगी । अबकी बार, बस इस बार मुझे माफ कर दीजिये ।'

रोती हुई मुक्ति के सिर पर पिता ने हाथ फिराया और बोले–'बेटी ! हमें विश्वास है कि तुम अच्छी लड़की बनने की कोशिश भी करोगी । तुम अच्छे काम करते हो तो हमें बड़ी प्रसन्नता होती है । हमारा सिर गर्व से ऊँचा होता है, पर तुम्हारे बुरे काम करने पर हम सोचते हैं कि हमें कुछ नहीं

आता जो तुम्हें अच्छा न बना पाये । तुम बच्चे हमारे जीवन की साधना हो बेटी । तुम्हारे व्यवहार से लोगों को तुम्हारा नहीं हमारा परिचय मिलता है कि हम कैसे हैं ?' यह कहते-कहते पिता का गला रुँध गया ।

पिताजी की बात सुनकर मुक्ति फफक-फफक कर रो उठी । यह आँसू पश्चात्ताप के आँसू थे । उस दिन से फिर मुक्ति ने चटोरापन, झूठ बोलना और चोरी करना छोड़ दिया । अब वह एक ही बात की कोशिश करती है-'जैसा पिताजी चाहते हैं, मैं वैसा ही बनूँगी । इससे उन्हें खुशी होगी ।'

भूत का भय

शिशिर को कहानी सुनने का बहुत शौक था । वह और उसकी बड़ी बहिन शैव्या दोनों रात को दादी माँ को घेर लेते और कहते-'दादी माँ ! हमें कहानी सुनाओ ।' कभी वे शेर की कहानी की फरमाइश करते तो कभी राक्षस की कहानी की । उनकी दादी माँ को सैकड़ों कहानियाँ याद थीं । वे उन्हे तरह-तरह की नयी-नयी कहानियाँ रात को सुनाया करती थीं ।

शिशिर का एक दोस्त था मनोज । मनोज को भी कहानियाँ बड़ी अच्छी लगती थीं । उसकी दादी माँ तो गाँव में रहती थीं और मम्मी कहानी सुनाती नहीं थीं । इसलिये मनोज कहानियों की तरह-तरह की पुस्तकें पढ़ता रहता था ।

मनोज अपने पिताजी से कहता-'पिताजी ! हमें कहानियों की पुस्तक ला दीजिये ।' पर वे उसे झिड़क देते । वे कहते अपने ही पाठ्यक्रम की पुस्तकें पढ़ो । उनमें मन लगाओ, पर मनोज सारे दिन पाठ्य पुस्तकें भी कहाँ तक पढ़ता ? परिणाम

यह हुआ कि वह अपने जेब खर्च के पैसों में से चोरी–छिपे कहानी की पुस्तकें घर पर लाने लगा ।

मनोज आजकल भूत–प्रेतों की पुस्तकें पढ़ता रहता था । वह शिशिर को भूत–प्रेतों की अनेकों कहानियाँ सुनाता रहता था । शिशिर अपनी दादी माँ से पूछता–'दादी ! भूत–प्रेत सचमुच में होते हैं ? वे कहतीं–'नही बेटे ! नहीं होते ।'

पर मनोज कहता था कि भूत–प्रेतों की बातें सच्ची होती हैं । शिशिर के भोले मन में भी यह विश्वास जमता जा रहा था । अब वह डरपोक भी बनता जा रहा था । अन्धेरे में जाने में उसे डर–सा लगता । वह सोचता कहीं भूत न आ जाये ? अन्धेरे कमरे में जाता तो शैव्या को साथ लेकर जाता । कमरे में अकेला रह जाता और खड़खड़ की आवाज होती तो चीख जाता । शिशिर चारों ओर नजरें घुमा कर देखता कि कहीं कोई भूत–प्रेत तो नहीं आ गया है । दादी माँ उसकी इस आदत से बड़ी तंग थीं । वे बार–बार उसे समझाती थीं कि डरपोक न बनो । उस समय तो वह उसकी बात मान लेता, पर बाद में फिर उसे डर लगने लगता ।

एक रात की बात है कि शिशिर की नींद आधी रात में खुली । उसे पेशाब करने के लिये बाहर जाना था । उसने अपनी बहिन शैव्या को जगाया । शैव्या ने बिजली जलाई, पर जैसे ही उसने दरवाजा खोला तो बिजली गायब हो गयी । अब तो शिशिर डर के मारे काँपने लगा । जैसे–तैसे वह वापस लौटकर अन्दर आया । बाहर खूब आँधी और तूफान था । शैव्या ने बड़ी कठिनाई से दरवाजा बन्द किया ।

शैव्या तो जाकर सो गयी, पर शिशिर की आँखों में नींद न थी । हवा की तेज आवाज और बिजली की कड़क उसे डरा रही थी । थोड़ी देर बाद उसे लगा कि छत पर बैठकर कोई पत्थर फेंक रहा है । छत से खूब जोर–जोर से खट–

खट की आवाज आ रही थी । टीन की छत खूब जोर–जोर से गूँज रही थी ।

शिशिर डरकर शैय्या से लिपट गया । बड़ी मुश्किल से उसे नींद आयी । नींद में उसे डरावने सपने आते रहे । सपने में उसने देखा कि एक काले रंग का भूत अपने बड़े–बड़े दाँत निकाले उसकी ओर दौड़ रहा है । वह चीख उठा ।

शिशिर की चीख सुनकर दादी माँ दौड़ी आयीं । उन्होंने देखा कि वह चारपाई पर पड़ा डर के मारे काँप रहा है ।

'क्या बात है बेटे ?' उन्होंने शिशिर के सिर पर हाथ फिराते हुए पूछा ।

दादी माँ से लिपटते हुए शिशिर बोला–'भूत !'

'भूत ! कहाँ है भूत ?' दादी ने पूछा । शिशिर ने सपने की सारी बात सुना दी ।

'पर वह तो सपना था । तुम उल्टी–सीधी बातें सोचते रहते हो न, इसलिये तुम्हें वैसे ही सपने भी आते हैं । जो हम सोचते हैं, वही सपने में देखते हैं ।' दादी शिशिर को समझा रही थीं ।

'पर भूत तो रात में ही आया था । सचमुच में आया था दादी !' शिशिर कह रहा था ।

'तुम्हें कैसे पता ? क्या तुमने उसे देखा था ?' दादी माँ ने शिशिर से पूछा ।

'नहीं दादी ! वह हमारे कमरे की टीन की छत पर बैठा पत्थर फेंक रहा था ।' शिशिर ने बतलाया ।

दादी कुछ–कुछ मुस्करा पड़ीं । उन्होंने शिशिर का हाथ पकड़ा और ठण्ड में ही बाहर ले गयीं । जीने से ऊपर चढ़कर वे छत पर पहुँचे । शिशिर ने वहाँ पर जाकर देखा कि अभी भी बड़े–बड़े ओले जमे हुए पड़े हैं ।

दादी हँसकर शिशिर से बोलीं–'देख रहे हो ! रात में

खट-खट की आवाज किसकी हो रही थी । भूत-प्रेत कुछ भी न था । ओले बरस रहे थे । उनकी आवाज थी ।'

शिशिर आँखें फाड़-फाड़कर उन ओलों को देख रहा था । वह सोच रहा था कि उसकी सारी कल्पनायें बेकार थीं । अकारण ही वह इतना डरा ।

दादी माँ खड़ी हुई अभी भी समझा रही थीं-'शिशिर बेटा ! भूतों को मानना अन्धविश्वास मात्र है । ऐसी बिना सिर-पैर की बातों को मानने से कोई लाभ नहीं है । इससे हमारा आत्म-विश्वास समाप्त होता है और भय की भावना बढ़ती है । आदमी कायर व डरपोक बनता है । कायर व्यक्ति कभी किसी काम में सफल नहीं होता । तुम बहादुर बनो । बेकार का डर छोड़ो ।

दादी की बात शिशिर की समझ में आ गयी थी । अब उसे अन्धेरे में जाने से डर नहीं लगता । भूत-प्रेतों की कहानियों पर भी वह विश्वास नहीं करता ।

अपना काम अपने आप

जीतू को अपने मोती कुत्ते से बहुत प्यार था । वह उसकी खूब देखभाल करता था । रोज नहलाता था । रोज समय पर उसे खाना खिलाता था । जीतू मोती को बहुत-सी बातें सिखाता जैसे तेजी से दौड़ना, ऊपर उछलना, किसी चीज की पहिचान करना आदि ।

धीरे-धीरे मोती बहुत शरारती होता जा रहा था । एक दिन उसने छलांग लगाई बरामदे में लटके चिड़िया के घोंसले को गिरा डाला । जीतू स्कूल से आया तो उसने पाया कि घोंसला टूटा पड़ा है । तिनके जमीन पर बिखरे पड़े हैं और चिड़िया चीं-चीं करके रो रही है । मोती भौं-भौं करके

चिड़िया को भगाने की कोशिश कर रहा है । जीतू पलभर में समझ गया कि यह सब करतूतें मोती की ही हैं । उसने मोती के दोनों कान खींचे, एक चपत लगायी और समझाया कि ऐसा नहीं करना चाहिये ।

माँ बोली—'देखो ! यह बेचारी चिड़िया कितने दिनों से जुटी है । एक—एक करके तिनके बीन कर लाती है । कितनी मेहनत से इसने घोंसला बनाया है । इस मोती ने एक ही झटके में इसकी सारी मेहनत पर पानी फिरा दिया ।'

'ओह ! बेचारी नन्हीं चिड़िया ।' जीतू के मुँह से निकला । फिर वह सोचकर बोला—'माँ ! गलती मोती की है । मैं उस गलती का प्रायश्चित्त करूँगा ।'

'कैसे बेटे ?' माँ ने पूछा ।

'मैं चिड़िया का घोंसला बनाऊँगा ।' जीतू कहने लगा ।

माँ बोली—'पर बेटे ! चिड़िया उसमें बैठेगी नहीं । अण्डे नहीं देगी ।'

'वाह माँ ! तुम भी क्या बात करती हो । मैं इतना बढ़िया घोंसला बनाऊँगा कि चिड़िया देखती रह जायेगी । वह आराम से उसमें बैठेगी और मजे से अण्डे देगी ।' जीतू बोला ।

जीतू की माँ कुछ नहीं बोली । वह जानती थी कि जीतू अपने मन की करेगा जरूर । फिर जीतू के घोंसले में चिड़िया भले ही न बैठे, माँ को उसमें हर्ज भी क्या था ? जीतू इसी बहाने एक नया काम जो सीख लेगा ।

दूसरे दिन रविवार की छुट्टी थी । जीतू नाश्ता करके, तैयार होकर अपने काम में जुट गया । उसने बाग से सूखे तिनके इकट्ठे किये । कुछ टहनियाँ लाया । बेकार पड़े तार से घोंसले का एक साँचा बनाया । फिर उसमें आड़े—तिरछे करके तिनके लटकाये । जैसे—तैसे घोंसला बनकर तैयार हुआ ।

तब जीतू ने उसके अन्दर रुई की मुलायम–मुलायम पर्तें बिछा दीं । यों वह घोंसला बाहर से देखने में अधिक सुन्दर तो नहीं था, परन्तु अन्दर से वह बड़ा आरामदेह लग रहा था ।

जीतू ने घोंसला शहतीर पर लटका दिया । वह बड़ा ही प्रसन्न हो रहा था । मन ही मन सोच रहा था कि चिड़िया आयेगी तो घोंसला तैयार देखकर खुशी से फुदकेगी । फिर वह इस घोंसले में नन्हें–नन्हें अण्डे देगी । उनसे बच्चे निकलेंगे । वे चीं–चीं करके बोलेंगे, घर में फुदकेंगे ।

पर जीतू की सारी कामनायें व्यर्थ गयी । शाम को चिड़िया और चिरौटा आये । उन्होंने अपनी चोंच से घोंसले का एक–एक तिनका निकाल कर फेंक डाला । जीतू दौड़ा–दौडा माँ के पास गया और रुआँसा होकर बोला–'माँ ! चिड़िया ने तो सारा घोंसला ही नोंच कर फेंक डाला है ।'

'बेटे ! मैंने तो तुम्हें पहले ही समझाया था । ये छोटे–छोटे जीव–जन्तु भी स्वावलम्बी होते हैं । अपनी मेहनत से स्वयं अपना ही काम करते हैं । हम ही हैं जो दूसरों पर निर्भर रहते हैं । आराम–तलबी चाहते हैं ।' माँ बोली ।

'तो माँ ! मेरा आज का सारा परिश्रम बेकार ही गया ?' जीतू पूछने लगा ।

माँ ने समझाया–'नहीं बेटे ! पहला सबक तो तुम्हें चिड़िया से यह मिला कि हमें अपना काम स्वयं करना चाहिये । अपना काम दूसरों से कराने की आदत अच्छी नहीं है । दूसरे, भले ही यह चिड़िया तुम्हारे बनाये घोंसले में बैठे, पर तुमने सारी चीजें एक स्थान पर रखकर उसकी सहायता तो की ही है ।'

जीतू ने दूसरे दिन स्कूल से आकर देखा कि चिड़िया और चिरौटे ने मिलकर उसके बनाये घोंसले के सारे तिनके निकाल लिये हैं । उन तिनकों से उन्होंने पास में ही एक नया

घोंसला बना लिया है । वे दोनों ही बड़ी प्रसन्नता से बैठे–बैठे चीं–चीं–चीं–चीं करके शोर मचा रहे हैं ।

माँ बोली–'देखा जीतू ! आज ये दोनों कितने खुश हैं । यह खुशी अपने श्रम की सफलता की है । स्वयं परिश्रम करके जो कार्य किया जाता है, उसी में सच्चा आनंद मिलता है । आज ये दोनों दिनभर घोंसला बनाने में ही जुटे रहे हैं ।

जीतू सोचने लगा कि यह नन्हीं चिड़िया भी अपना काम अपने आप करती है । किसी पर बोझा नहीं बनती । फिर मैं भी अपना सारा काम माँ पर क्यों छोड़ूँ । मैं भी अपना अधिकतर काम अपने आप ही करूँगा ।

अब जीतू अपने आप जूतों पर पालिश करता है । खुद अपना स्कूल का बस्ता लगाकर रखता है । प्यास लगने पर माँ को आवाज नहीं लगाता वरन् अपने आप पानी लेकर पी लेता है । अपनी चीजें भी संभाल कर स्वयं रखता है । माँ उसे अब बात–बात में टोकती भी नहीं है । वे उसकी सभी से प्रशंसा करती रहती हैं ।



मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा